Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

0
2·1

श्वासोच्छ्वासरहस्य

प्राणायाम चिकित्सा

लेखक—
श्री स्वामी अभयानन्द सरस्वती

प्रकाशक—
वीरेन्द्र नाथ अश्विनी कुमार
प्रकाशन मन्दिर
बाजार चौक, मुरादाबाद।

ष्टयब्द १९,६०,८५,३०,६२
वि० सम्वत् २०१८

मूल्य
८५ न०पै०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री देवेन्द्र नाथ अश्विनी कुमार प्रकाशक
मुरादाबाद

मुद्रक
राजकमल प्रेस,
मुरादाबाद

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वितीयावृत्ति की भूमिका

मुझे आज बड़े हर्ष के साथ इस बात के प्रकाशित करने का अवसर प्राप्त हुआ है कि इस ग्रन्थ की प्रथमावृत्ति की सर्व प्रतियाँ बहुत शीघ्र ही निकल गयीं। जिन लोगों ने इस पुस्तक का सावधानों से अध्ययन किया और इसमें दी हुई बिना औषधि के चिकित्सा प्रयोगों को कुछ भी प्रयोग किया वे इसके प्रशंसक बन गये। मुझे इस बात से बहुत ही सन्तोष हुआ कि इस पुस्तक के साधनों द्वारा बहुत से बिना औषधि (चूर्ण, वटी, अवलेहादि) के सेवन करने वाले सज्जनों ने अपने खोये हुए स्वास्थ्य को पुन: प्राप्त करके शरीर को पूर्णतया समर्थ बना लिया। कितने लोग तो बहुत-सी अंगरेजी और देशी औषधों को सेवन से हताश हो गये थे [illegible] कठिन रोगों से मुक्त [illegible] धन्यवाद देने लगे। इसमें बतलाये नियमों और साधनों द्वारा [illegible] और दृढ़ता प्राप्त किये। इन्हीं कारणों से इस पुस्तक की माँग अधिक [illegible] हुई। इसलिये मुझे इस बात का बड़ा खेद रहा कि प्रथमावृति की पुस्तक जो सम्वत् १६८० वि० में छपा था बिक जाने पर भी मण्डल के प्रकाशन विभाग में अन्य आवश्यकीय योग साधन माला की पुस्तकों के छपाने आदि के कारण प्राकृत धनाभाव से कई वर्षों तक दूसरा संस्करण इस पुस्तक का योग मण्डल द्वारा प्रकाशित न हो सका। परन्तु परमात्मा की कृपा से दानवीर श्रीमान् ठाकुर बैजनाथसिंह इनानजाम (ब्रह्मा) की दृष्टि मंडल की ओर हुई और पिछली दस पुस्तकों को पुन: प्रकाशित करा देने का व्यय भार स्वीकार किया, उक्त ठाकुर सा० कुछ ही सहायता कर पाये थे कि आपका स्वर्गवास हो गया। तिस पर हार्दिक धन्यवाद उनके सुपुत्र श्रीमान् ठा० वेदनाथसिंह जी को है कि अपने पूज्य पिता जी कि संकल्पित विचारों से सहमत होकर तदनुसार सहायता देना आरम्भ कर दिया है। मुझे दृढ़ आशा है कि अब इस पुस्तक के अतिरिक्त जो अत्यन्त उपयोगी पुस्तकें पुन. द्वितीयवार छपाने को शेष हैं वह सब छप जायेगी इस आवृति में पहली आवृति से अधिक संशोधन और परिवर्धन भी किया गया है। आशा करता हूँ कि इस पुस्तक से लोग दिन पर दिन विशेष लाभ उठायेंगे और परीक्षा कर सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग ने में सर्वदा उद्यत रहेगे। शमित्योम् ॥

ता० २५-३-१६३३ ई० [अभयानन्द सरस्वती

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विनम्र निवेदन

"प्राणायाम चिकित्सा" नामक यह पुस्तक आपकी सेवा में प्रस्तुत है।

इस पुस्तक के लेखक योग विद्या से सुशोभित सर्व श्री १०८ स्वामी अभयानन्द जी सरस्वती हैं। प्राणायाम द्वारा चिकित्सा करके अपने स्वास्थ्य को निरोग बनाने में आपका यह ग्रन्थ बड़ा ही महत्वपूर्ण है।

प्रस्तुत पुस्तक की एक लिपि मेरे हाथ आर्य समाज, नवाँ शहर जालन्धर के पुस्तकालय से मिली। इसे अद्योपान्त पढ़ने पर मेरे हृदय में इस महत्वपूर्ण पुस्तक को प्राप्त करने की उत्कण्ठा उठी। इसी खोज में मैंने कई स्थानों को पत्र लिखे परन्तु उक्त पुस्तक कहीं से भी प्राप्त न हो सकी।

श्री स्वामी जी बनारस के निवासी थे। मैं कार्यवश बनारस गया। मैंने वहाँ पर पता लगाया तो पता चला कि स्वामी जी का स्वर्गवास हुए लगभग १५ वर्ष हो गये हैं और उनका आश्रम आदि सभी समाप्त हो गया है।

ऐसी स्थिति में मैंने इस अमूल्य ग्रन्थ को जनता के हितार्थ प्रकाशित कराना उचित समझा।

आशा है इस पुस्तक से न केवल भारतीय जनता ही वरन समस्त संसार के मानव लाभ उठायेंगे।

विनीत

आर्य समाज
मुरादाबाद
१-१-६२

हरिदत्त गौतम
भूतपूर्व सेक्रेटरी,
मुरादाबाद स्पिनिंग एण्ड वीविंग मिल्स

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* ओ३म् तमसो मा ज्योतिर्गमय *

अथ प्राणायाम-चिकित्सा

प्रार्थना ।

ॐ सुमित्रियानआपओषधयःसन्तु । दुर्मित्रियास्तस्मै-सन्तुयोस्मान्द्वेष्टियंचवयंद्विष्मः ॥ यजु०अ० ६ मं० २२ ॥

(सुमित्रयान) हे परमेश्वर ! आपकी कृपा से (आपः) अर्थात् जो प्राण और जल आदि पदार्थ तथा (ओषधयः) सोमलता आदि सब औषधि (नः) हमारे लिये (सुमित्रियाः) (सन्तु) सुखकारक हों तथा (दुर्मित्रियाः) जो दुष्ट, प्रमादी, हमारे द्वेषी लोग हैं और हम जिन दुष्टों से द्वेष करते हैं उनके लिये विरोधिनी हों, क्योंकि धर्मात्मा और पथ्य के करने वाले मनुष्य हैं उनको ईश्वर के रचे सब पदार्थ सुख देने वाले होते हैं और जो कुपथ्य करने वाले तथा पापी हैं उनके लिये सदा दुःख देने वाले होते हैं। यह मन्त्र वैद्यक विद्या के मूल को प्रकाश करने वाला है।

* चत्वार चिकित्सा वर्णन *

आथर्वणीरांगिरसीर्दैवीर्मनुष्यजाउत । ओषधयः प्रजायन्तेयदात्वंप्राणजिन्वसि ॥ अथ० ११।४।१६ ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"हे प्राण ! (यदा) जब तक तू (जिन्वसि) प्रेरणा करता है तब तक ही आथर्वणी, आंगीरसी, दैवी और मनुष्य कृत औषधियाँ (प्रजायते) फल देती हैं ।" इस मन्त्र में चार प्रकार के चिकित्साओं का बोधन कराया है यथाः—

(१) 'आथर्वणी'—अ-थर्वा नाम योगी का है। योगी लोग मन्त्र प्रयोग से जो चिकित्सा करते हैं उसका नाम आथर्वणी चिकित्सा होता है। हृदय के प्रेम से, परमेश्वर भक्ति से, मानस शक्ति से और आत्म-विश्वास से मन्त्र सिद्धि होती है । यह आथर्वणी चिकित्सा सब से श्रेष्ठ है क्योंकि वह आत्मा की शक्ति से होता है ।

(२) 'आंगीरसी' अंगों, अवयवों और इन्द्रियों में एक प्रकार का रस रहता है। जिसके कारण हमारी अथवा प्राणियों के शरीर की स्थिति होती है। उस रस के द्वारा जो चिकित्सा होती है वह आंगिरस चिकित्सा कहलाती है । मानसिक इच्छा शक्ति की प्रबल प्रेरणा से इस रस का अंग प्रत्यंगों में संचार करने से रोगों की निवृत्ति होती है । मानसिक चितैकाग्र का इसमें विशेष सम्बन्ध है । रुग्ण अवयव को सम्बोधित करके निरोगता के भाव की सूचना देना, तथा रोगी को अपनी निज—अंग रस शक्ति की प्रेरणा करने के लिए उत्तेजित करना इस विधि में मुख्य है। निज आरोग्य के लिए बाह्य साधनों की निरपेक्षता इसमें होने से इसको आंगिरस चिकित्सा अर्थात् अपने निजअंगों के रस द्वारा होने वाली चिकित्सा कहते हैं ।

(३) दैवी—जल, तेज (सूर्य वा अग्नि), वायु आदि देवों के द्वारा जो चिकित्सा की जाती है वह दैवी चिकित्सा है जल चिकित्सा, सौर चिकित्सा, वायु चिकित्सा, विद्यु-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

च्चिकित्सा, वर्ण चिकित्सा आदि सब दैवी चिकित्सा के प्रकार हैं। इसके अतिरिक्त देव यज्ञ अर्थात् हवन द्वारा जो चिकित्सा होती उसका भी समावेश इसमें होता है।

(४) 'मनुष्यजा'—मनुष्यों की बनाई औषधियाँ, अर्थात् कषाय, चूर्ण, अवलेह, भस्म, कल्प आदि प्रकार जो वैद्यों, डाक्टरों और हकीमों के बनाये होते हैं, उनका समावेश इसमें होता है। ये मानवी औषधियों के प्रकार हैं।

इन चार प्रकार की चिकित्साओं में मन्त्र चिकित्सा, मानस चिकित्सा, विद्युच्चिकित्सा, अग्नि चिकित्सा, हवन चिकित्सा सौर चिकित्सा, वर्ण चिकित्सा, वायु चिकित्सा, जल चिकित्सा, औषधि चिकित्सा इत्यादि चिकित्साओं का भी समावेश किया गया है। मन्त्र तथा मानस और विद्युच्चिकित्सा के विषय में अथर्ववेद १०।७ और ऋग्वेद १०।१६१।४ के मन्त्रों को देखिये। ऋग्वेद मन्त्र २ सू० ३३ मन्त्र ७ में लिखा है कि "क्कस्य ते रुद्र मृडया कुर्हस्तो यो अस्ति भेषजो जलाषः। अपभर्ता रपसोदैव्यस्याऽमीनुमावृषभचक्ष्मीथाः" मृड़याकुः स्वःस्तः' अर्थात् सुखदायक शोधक हाथ, मानसिक चिकित्सा [Mental healer] करने वाले वैद्य का होता है। जिसके हाथ की अंगुलियों द्वारा मानसिक विद्युच्छक्ति का रोगी के शरीर में प्रवेश होकर वहाँ आरोग्य की स्थापना की जाती है......'हस्तःयो अस्ति भेषजो जलाषः अर्थात् हाथ कि जो औषधरूप और जलरूप है। 'दैव्यंरपः' अर्थात् इन्द्रिय जन्य दोष दूर करने के लिए 'मानस चिकित्सा' ही श्रेष्ठ है इसमें कोई सन्देह नहीं।

(१) अग्नि तथा हवन चिकित्सा

अग्नि तथा हवन चिकित्सा के विषय में शतपथ ब्राह्मण

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में लिखा है कि "मनश्च है व वाकूच युजौ देवोभ्योयज्ञं वहत:" शतपथ ४।४ अर्थात् मन और वाणी मिलकर यज्ञ देवों तक पहुँचाते हैं। जातकर्म संस्कार में लिखा है कि प्रसूत स्थान में दस दिन नित्य सायं और प्रात: संधि वेला में दो मन्त्रों से भात सरसों मिला के बराबर अहुतियाँ देवे। "ओंशण्डामर्काउपवीरःशौंडिकेयऽउलूखल:००" "ओं ... .. उपश्रुतये हर्यक्षायकुम्भी शत्रवेपात्र पाणये नृमणये हन्त्रीमुखाय-सर्षपारुणायच्यवनाय। इदन्नमम्" ॥ साधारण हवन तो सदैव करना ही चाहिये किन्तु १० दिन तक प्रात: सायं दो काल भात (पके हुए चावल) ओर सरसों का हवन करने का विधान है चावल अन्नों में एक श्रेष्ठ पौष्टिक, वीर्य्यवर्द्धक अन्न है और सरसों परम रोगनाशक है। राक्षस बाधा की निवृत्ति के लिये वैद्यक ग्रन्थों में होम अथवा धूप है कि वायु में विचरने वाले अदृश्य सूक्ष्म विषैले जन्तु ही राक्षस हैं।

तदवधूनिति। अवधूतंरक्षः। अवधूता अरायतः इति।

शतपथ ब्रा० १।१।४ में लिखा है कि चर्म झटकने से उस पर चिपके हुए राक्षस नीचे गिरते हैं और उनका नाश होता है। राक्षस चमड़े पर चिपक जाते हैं, वे मनुष्य के आँख से नहीं दिखाई देते, और झटकने से दूर होते हैं, इतने सूक्ष्म ये राक्षस हैं। सूर्य अस्त होनें पर इनको बल आता है, अँधेरे में ये प्रबल होते हैं। और सूर्य किरणों से इनका नाश होता है। ये नाना प्रकार के रोग उत्पन्न करते हैं और मनुष्यों तथा अन्य प्राणियों को सताते हैं। राक्षसों के विषय में इतना ही यहाँ कहना है कि 'रक्षः' राक्षस, असुर असुर आदि शब्द विशेष अर्थ में

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैद्य शास्त्र में प्रयुक्त होते हैं ये सजीव प्राणाधारी सूक्ष्म प्राणी हैं कि जो मनुष्य की आँखों से भी दिखाई नहीं देते। वेद में सौर चिकित्सा का भी वर्णन आया है—

(२) सौर चिकित्सा

न: सूर्यस्य संदृशेमायुयोथा: ॥ ऋ० २।३३।१

अर्थात् "सूर्य्य प्रकाश से हमारा कभी वियोग न होवे" क्योंकि सूर्य ही सब प्रकार के दोष दूर करके प्राणियों की पुष्टि करता है। यहाँ तक वेद कहता है कि—सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥ऋ० १।११५।१ सूर्य स्थावर जंगम जगत् का आत्मा है। आदित्या ह वै प्राण: ॥ प्रश्न० उ० १।५

यत्सर्वंप्रकाशयति तेन सर्वान् प्राणान् रश्मिषु सन्निधत्ते ॥ प्रश्न० उ० १।६

"आदित्य ही निश्चय से प्राण है। जब आदित्य प्रकाशमान होता है तब वह सब प्राणों को अपनी किरणों में रखता है।" तात्पर्य—सूर्य किरणों के द्वारा सब जगत् में प्राण तत्व का संचार होता है। जहाँ प्राण पहुँचता है वहाँ से मृत्यु का दूर होना स्पष्ट ही है। इसलिए घरों की रचना ऐसी होनी चाहियें कि सूर्य किरणों के द्वारा प्राण सब घर की शुद्धता कर सके और रहने के घरों से मृत्यु को दूर हकाल देवे। रोग उत्पादक कृमियों का नाश सूर्य किरण द्वारा होता है ऐसा भी वेद में कहा है, वह सब यहाँ अनुसंधान से देखने योग्य है। सौर चिकित्सा द्वारा योगी लोग बड़ा लाभ उठाते हैं। प्राणायाम द्वारा इस प्राण पूर्ण तप्त वायु को अन्दर लेते और कुम्भक द्वारा प्राण को अपने शरीर में स्थिर करते हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्य प्रकार युक्ति प्रयुक्त से सूर्य किरणों के द्वारा आरोग्य सम्पादन करना सौर चिकित्सा में हो सकता है।

विविध रंगों वाली गौवों के दूध के विविध इष्ट और अनिष्ट परिणाम सौर चिकित्सा किंवा वर्ण चिकित्सा के साथ सम्बन्ध रखते हैं।

उद्यन्नादित्य रश्मिभिः शीर्ष्णो रोगमनिनीशत् ॥

अथर्व० ६।८।

अर्थात् प्रातःकाल के सूर्य किरणों से अनेक व्याधी नाश होते हैं। सूर्य किरण विष दूर करके आरोग्य का संवर्धन करने हारे हैं। इस कारण सूर्य का नाम "शोचिष—केश" ऐसा वेद में आया है। जिससे किरणों की शुद्धता करने का धर्म स्पष्ट पाया जाता है। सूर्य के विषय में और देखिये—

अपचितः प्रपतत सुपर्णो वसतेरिव । सूर्य्यः कृणोतु भेषजं चन्द्रमा वोपोच्छतु ॥ अथ० ॥ ६।८३।३५

भावार्थ—"जिस प्रकार गरुड़ दौड़ जाता है उसी प्रकार स्फोटक व्याधि दूर चली जायगी, इसके लिए सूर्य औषधि बनावे तथा चन्द्रमा अपने प्रकाश से उसका नाश करे।" सूर्य किरणों द्वारा जो चिकित्सा होती है वह रश्मिस्नान नाम से प्रसिद्ध है। इस रश्मिस्नान से अनेक व्याधियाँ दूर होती हैं।

(३) वायु चिकित्सा।

(Airopathy)

वायु मनुष्य का प्रथम भोजन है। इसलिये स्वास लेते समय शुद्ध वायु का ग्रहण करना परमावश्यक है। यह बड़ी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़राबी है कि मुख से श्वास ली जाती है। श्वास सदैव नाक से लेना चाहिए। नथनों की राह वायु जाने में हवा नथनों की झिल्ली के पर्दों से छनकर जाता है और इस प्रकार वायु का गर्द व गुबार और रोग के कीड़े अन्दर नहीं जा सकते। नियमानुसार श्वास लेने से सुन्दरता व आरोग्यता मिलती है। गहरी श्वास लेने से पुराने अजीर्ण वालों को अधिक लाभ होता क्योंकि ऐसा करने से प्राणप्रद वायु (आक्सीजन) अधिक पहुँचता है। ऋग्वेद में वायु की महिमा जिस स्थल में वर्णन किया है लिखा है कि वायु में अमृत का खजाना है। यथा—

यददोवाततेगृहेऽमृतस्यनिधिर्हितःततोनोदेहिजीवसे ॥ ऋ० १०।१८६

अर्थात् जहाँ अमृत है वहाँ रोग नहीं हो सकते, इसलिए अमृत का खजाना लेकर वायु जहाँ पहुँचता है, वहाँ निरोगता प्राप्त हो सकती है। यही वायु चिकित्सा का मूल वेद में है। यथा—

आवातवाहिभेष ंविवातवाहियद्रपः । त्वंहिविश्व-भेषजोदेवानांदूतईयसे ऋ० १०।१३

"हे वायो! तुम्हारी दवाई ले आवो और यहाँ से सब दोष दूर करो, क्योंकि तूही सब औषधियों से युक्त है" पृथ्वी, आप (जल), तेज की अपेक्षा वायु सूक्ष्म तत्व है। इसलिये इससे आरोग्य सम्पादन करना और रोग दूर करना अन्य प्रकारों से श्रेष्ठ है। योगी लोग प्राणायाम द्वारा इसी प्राण वायु से आरोग्य और दीर्घ आयुष्य सम्पादन करते हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दयालु परमेश्वर ने अमृतमय वायु सर्वत्र भर रक्खा है, परन्तु अज्ञानी मनुष्य फिर भी अनारोग्य में सड़ते ही हैं !!! यदि मनुष्य प्रतिदिन सौ पचास प्रणायाम विधिपूर्वक करता जायगा तो उसके पास रोग खड़ा भी नहीं होगा।

द्वाविमौवातौवातआसिंधोरापरावतः । दक्षंतेअन्यआवातुपरान्योवातुयद्रपः ॥ ऋ० १०।१३७।२

"दो वायु हैं। एक समुद्र के ऊपर से आता है और दूसरा जमीन के ऊपर से चलता है। जो समुद्र के ऊपर से जमीन पर आता है वह बल को लाता है। तथा जो जमीन के ऊपर से आता है वह दोषों को साथ ले जाता है।" बलवान वायु औषध ले आवे तथा अन्य वायु दोषों को दूर करे। वायु सम्पूर्ण औषधियों का केन्द्र है इस कारण उसको देव दूत कहते हैं। इसलिये शुद्ध वायु का सेवन करना चाहिये। शहरों की तथा गृहों की ऐसी रचना होनी चाहिये कि उसमें ऐसा शुद्ध वायु सदैव आता रहे। मनुष्यों के स्थानों पर से जो वायु आता है वह नाना प्रकार के रोग बीजों को साथ लाता है, इस कारण वह लाभदायक नहीं होता है। मनुष्य के शरीर में भी श्वास-उच्छ्वास ऐसे दो वायु कार्य करते हैं। जो शुद्ध वायु अन्दर जाता है वह बल उत्पन्न करता है तथा जो अन्दर से अशुद्ध वायु बाहर निकलता है वह अशुद्धी ले आती है। सब शरीर का स्वास्थ्य इन वायुओं पर अवलम्बित है। 'वात आयातु भेषजं, ऋ० १०।१८६ वायु अपने रोग दूर करने वाले गणों को हमारे पास ले-आवें। योग शास्त्रांतर्गत प्राणायाम की क्रिया तथा प्रक्रिया इसी वायु के साथ संबद्ध है योग्य प्रकार प्राणायाम करने से अनेक व्याधियाँ दूर होती हैं। यह बात अन्तः शुद्धि के विषय में हुई।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाह्य शरीर के अनेक रोग भी विविक्षित प्रकार के वायु सेवनादि से ठीक होते हैं। शुद्ध वायु नित्य सेवन करने वाले महोदय को प्रायः रोग होते ही नहीं यह अनुभव है, वेद ने भी वही बात स्पष्टता से बतालाया है।

(४) जल-चिकित्सा।

अप्सुमेसोमोअब्रवीदन्तर्विश्वानिभेषजा। अग्निंच-विश्वशंभुवमापश्चविश्वभेषजीः॥ ऋ० १।२।१२

"पानी के अन्दर सम्पूर्णं औषधियाँ विद्यमान हैं जिस प्रकार अग्नि सब प्रकार से कल्याण करता है उसी प्रकार जल भी सम्पूर्ण औषधि रूप है।"

आपोहिष्ठामयोभुवस्तानऊर्जेदधातनमहेरणायचक्षसे॥ ऋ० ७।६।५

"जल अत्यन्त आरोग्यदायक तथा बल देने वाला है।"

जलाषेणाभिषिंचतजलाषेणोपसिंचतजलाषमुग्रंभेषजं-तेननोमृडजीवसे॥ अथ० ६।५७।२

"जल से अभिषिंचित करो, जल से उपसिंचन करो, जल ही बड़ा भारी औषध है, उसी के सेवन से जीवन सुखमय होता है।" इस जल चिकित्सा के मन्त्रों में अग्नि के लिये 'विश्व-शंभुव" ऐसा विशिष्ट शब्द आया है। जिसका अर्थ "सम्पूर्ण कल्याण का उत्पादक" ऐसा होता है अग्नि भी आरोग्य सवर्धक होता है ऐसा शब्द से प्रतीत होता है। जिस कारण अग्नि का उपयोग हवन में होता है। "ऋतुसंधिषुव्याधि-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जायते । ऋतुसंधिषुयज्ञाः क्रियन्ते ।" इस प्रकार के ब्राह्मण वचन बताते हैं कि रोग बीजों को हटाने के अर्थ यज्ञ का उपयोग होता है।

आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्ते कृण्वन्तुभेषजम् ॥ ऋ० ६०।६

(आपः) अनेक विधि के जल (शिवाः) कल्याणकारक हैं। (शिवतमाः) अति कल्याणकारी रोगनाशक, दुःखनिवारक हैं (शान्ताः) शान्त हैं, (शान्ततमाः) बहुत शान्त प्रत्येक रोग को शान्तकारी हैं (ताः) उन पानियों को (भेषजम्) औषध = दवा (कृण्वन्तु) करो । अर्थात् जलों द्वारा चिकित्सा करो ।

शंनोदेवीरभिष्टयआपोभवन्तुपीतये । शंयोरभिस्रवन्तुनः ॥ ऋ० १०।६।४

"दिव्य जल हम सब के लिये शान्ति देने वाला तथा सहायता और संरक्षण करने वाला होवे । तथा वह जल हम सब के लिये शान्ति और रोगादिकों को दूर करने की शक्ति देवे । छान्दोग्य उपनिषद् में लिखा है कि:—

अपाँ सोम्य ! पीयमानानां योऽणिमासऊर्ध्वः समुदोपति सप्राणो भवति ॥ छां० प्र०६खं०६प्रपा०३

"हे सोम्य ! पिये हुए जल का जो अणुभाग है । वह खाये हुए अन्न के आश्रय ऊपर को बढ़ता है तब वह प्राण होता है । इस पर शिष्य ने पूछा कि जल ही प्राण है, इसमें क्या प्रमाण है ? मैं अन्न को प्राण कहता हूँ । आचार्य ने कहा कि—

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

षोडश कलः सोम्य ! पुरुषः पञ्चदशाहानिमाशीः काममपः पिबाऽऽपो मयःप्राणोनपिब्रतोविच्छेत्स्यत इति ॥ छां० प्र० ६खं ७ ग्र० १

"हे प्रिय शिष्य पन्द्रह दिन भोजन मत करो परन्तु यथेच्छ जल पीते रहो तो जल के पीने से तेरा प्राण नहीं निकलेगा क्योंकि जलमय प्राण है। और बिना जल के एक दिन भी जीना मुश्किल है। इससे सिद्ध हुआ कि जल से प्राण की उत्पत्ति होती है। अब रयि की जल से उत्पत्ति सिद्ध करते हैं। यथाः—

एतँ ह्वैत्वँ रयिं वैश्वानरं वेत्थ तस्मात् त्वँ रयिमान् पुष्टिमानसि ॥ शतपथ ब्रा० १०।६।५

"आप इस रयि नामक वैश्वानर को जानते हैं इससे ही धनवान् और पुष्टिमान् हैं।" इससे सिद्ध हुआ कि जल में पुष्टिमान् करने वाली रयि और बलवान् करने वाला प्राण है।

सोमरस से शरीर की पुष्टिता में प्रमाण :—

योवः शिवतमो रसस्तस्यभाजयते ह नः। उशतीरिव मातरः ॥ ऋ० मं० १० अ० १ सू० ६ मं० २

"हे जलो (योवः) जो तुम्हारा (शिवतमः) हर प्रकार कल्याण करने वाला (रसः) प्राण और रयि की साम्यावस्था वाला सोमरस है (तस्य) उसका (अजायत) सेवन कराओ (इव इह) जैसे इस जगत् में (मातरः) रस (रज) रूप रयि को धारण करने वाली मातायें (उशती) गर्भाशय में सेवन कराती हुई (नः) हमारी रक्षा करती हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोमरस के मुख्य गुण

तेजोऽसितेजोमयिधेहि, वीर्य्यमसिवीर्य्यं मयिधेहि, बल-मसिबलंमयिधेहि । ओजोसि ओजोमयिधेहि । मन्युरसि मन्युमयिधेहि । सहोऽसिसहोमयिधेहि यजु० अ० १८। म०९

इस मंत्र का सोमदेवता होने से सोम के गुणों का विधान है:-

"हे सोम तेरा गुण तेज है अतः मुझ में तेज धारण कीजिए, तेरा गुण वीर्य है अतः मुझ में वीर्य को स्थापन करिए, तेरा गुण बल है अतः मुझ में बल दे, तेरा गुण ओज है अतः ओज मुझ में दीजिए, तेरा गुण अत्याचारियों को नष्ट करने वाला न्यायानुसार क्रोध है अतः न्यायानुसार दण्ड देने के लिये क्रोध मुझमें भी दीजिये, तेरा गुण सहन शीलता है अतः उस सहन शीलता को मुझ में भी धारण कीजिए। जल में प्राण और रयि की साम्यावस्था वाला जो सोम के विषय में उपरोक्त वर्णन आया है उसके प्रति वेदभगवान का उपदेश है कि "अप्स्वन्तरा सुषाव सोमम्" यजु० अ० १९ मं० २=जलों के बीच से सोम को खींचो। चरक संहिता में लिखा है कि "सोम एव शरीरे श्लेस्मान्तर्गतः"= सोम ही शरीर में श्लेस्म के बीच रहता है। खाद्य और पेयपदार्थ मेदा में जहाँ मिश्रण हुए वह श्लेष्मा नामक धातु हो जाता है। उससे निश्चय कर आगे की दूसरी धातु सोम रस नामक होती हैं जैसे कि निरुक्ताचार्य महर्षि यास्कजी लिखते हैं कि—

श्लेष्मणो रसः। निरुक्त अ० २ परिशिष्टे ॥

"श्लेस्मा से रस (सोम) होता है।"

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(प्रश्न) उदर में अग्नि से श्लेष्म और श्लेष्म से रस को कौन बनाता है ? [उत्तर] श्लेष्म बनाने वाली जठराग्नि और रस को बनाने वाली अन्वाहार्य्य पाचनाग्नि है । (प्रश्न) इन अग्नियों का यथा स्थान समर्थ रखने वाला कौन है ? [उत्तर] इनके समर्थ रखने वाले देव हैं (प्रश्न) देव कौन है ? उत्तर :—

अथहैनंगार्हपत्येऽनुशशासपृथिव्यग्निरन्नमादित्य इति । अथहैनमन्वाहार्य्य पचनोऽनुशशा सापोदिशो नक्षत्राणि चन्द्रमा इति ॥ छां० उ० प्र० ४ खं० ११–१२ प्र० १–१

"सूर्य्य, पृथिवी, अन्न और अग्नि यह चार जठराग्नि के जल, दिशा, नक्षत्र और चन्द्रमा यह चार अन्वाहार्य्य पाचनाग्नि के देव हैं ।

जल से उपचार करने की विधि

अपां पृष्टमसि योनिरग्नेः समुद्रमभितः पिन्वमानम्- वर्धमानोमहां २॥ आचपुष्करे दिवो मात्रयावरिम्णा- प्रथस्व ॥ यजु० अ० ११ मं० २९

अर्थ—[अग्ने] अन्वहार्य्य पाचनाग्नि का [योनिअसि] जो नाभी से नीचे घर है अर्थात् [समुद्रम्] सोम रस नामक धातु के बनने वाले स्थान को [च] और [पृष्ठम्] पीठ को [पुष्करे] कुण्ड में [आप्रथस्व] स्थापन करके [दिवः] स्वास्थ्य व सामर्थ्य की [मात्रया] मात्रा से [अपाम्] जलों की [अभितः] सर्व ओर से [पिन्वमानम्] धारायें डालते हुए [वरिम्णा] वर्णनीय क्रिया से [महान्] अधिक [वर्धमान]

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वास्थ्य की रक्षा करो [प्रश्न] किस समय जलक्रिया करें ? [उत्तर] यजु० अ० १३ मं० ३० में आया है कि प्रातःकाल चार बजे जलचिकित्सा करे ।

(५) सीनीवाली = वाष्प चिकित्सा ।

सिनाति भूतानि वालं पर्वणोतस्तस्मिन्ननवती ।
निरूक्त दैवत कां० अ० ५।११।१०

अर्थात् मनुष्यों के ग्रसित शरीर को जो क्रिया छुटाता है उसको सीनीवाली कहते हैं । यह भी जल क्रिया ही है । यथा :—

स ँ सृष्टां वसुमिरु द्रै धीरैः कर्मण्यां मृदम् हस्ताभ्यां मृद्वीम कृत्वा सिनीवाली कृणोतुताम् ॥ सिनीवाली सुकपर्दा सुकुरीरा स्वौपशा । सा तुभ्यमदिते मह् ये खां ददातु हस्तयोः ॥२॥ उखां कृणोतु शक्त्या बाहुभ्यामदितिधिया । माता पुत्रं यथोपस्थे साग्नि विभत्तुँ गर्भ आमखस्य शिरोसि अन्न औषधिम्— इति ग्रन्थान्तरम् ।

"मिट्टी की हाड़ी अग्नि से पकाई हुई लेकर उसमें जल भरे । फिर किसी पात्र से ढक कर चूल्हे पर रक्खे—चूल्हे में अग्नि जलावे जब पानी हाँड़ी के अन्दर खौलने लगे दोनों हाथों से हाँड़ी को उतारे । फिर जैसे माता दूध पिलाते समय अपने पुत्र को ओढ़नी के भीतर कर लेती है इसी प्रकार नग्न हो ऊपर से एक वस्त्र सिर से और पावों तक ओढ़ लेवे हाँड़ी को टाँगों के बीच रक्खे पश्चात् ढक्कन खोलकर वाष्प ग्रहण करे । इसी प्रकार कई हाँड़ी रक्खे जब तक कि स्वेद (पसीना)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न निकले। इस क्रिया से उचित प्रयोग द्वारा अखंड सुख प्राप्त होता है और निम्न प्रकार के रोगों से ग्रसित रोगियों को अवश्य लाभ पहुँचता है। चरक संहिता में लिखा है कि—प्रतिश्याय (जुखाम) खाँसी, हिचकी, श्वास, भारीपन कर्णशूल, शिरशूल, स्वरभंग (गलग्रह), एकांगवात, सर्वाङ्गवात, पक्षाघात, कुबड़ापन, कोष्ठरोग शुक्राघात, विशेजमाई, पसली का दर्द, पीठ का दर्द, कमर का दर्द, कोख का दर्द, मूत्रकृच्छ (सोजाक), अण्डवृद्धि, ऊरुस्तम्भ, पादजानु और जंघाओं का दर्द, सूजन, आसरोग, शीतकम्प, संकोच आयाम दर्द (देह का सुन्न पड़ जाना) आदि विकारों में सिनवाली द्वारा क्रिया ही करना चाहिये। जब तक उपरोक्त रोग सिनीवाली द्वारा न जाते रहें तब तक पूर्व कथित जल-चिकित्सा न करे। (प्रश्न) यदि किसी मनुष्य को कोई रोग न हो तो उसे जल क्रिया और जल-रूपान्तरी सिंनीवाली क्रिया नहीं करनी चाहिये? (उत्तर) नहीं नहीं पूर्व जल-क्रिया अवश्य करनी चाहिये।

(६) औषधि चिकित्सा।

औषधि=औष+धि अर्थात् औष (दोष)–दोष, मली रोग बीज। धि=धोने वाली धो कर दूर करने वाली। अर्थात् दोषों को धोने वाली, दोषों को दूर करने वाली जो चीज होती है उसको औषधि कहते हैं।

या औषधीःपूर्वाजाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा मनैनु बभ्रूणामहं शतं धामानि सप्तच ॥१॥ यदि मा वा जयन्नहमोषधीर्हस्त आददे आत्माय क्ष्मस्य नश्यति पुराजीव गृभो यथा ॥१०॥ ऋ० ८।५।१०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मनुष्य के पहले तीन युग औषधियाँ उत्पन्न हुई थीं, और इन औषधियों के सात सौ किंवा एक सौ सात जातियाँ हैं। औषधि को बलवतीं करके सेवन करने से रोग का बीज नष्ट होता है।" इस भूमण्डल पर प्रथम औषधियाँ उत्पन्न हो गईं थीं, और तीन युग व्यतीत होने के अन्तर मनुष्यों की उत्पत्ति हो गई। (१) वनस्पति युग, (२) जल जन्तु युग (३) सर्पयुग, (४) पशु युग और (५) मनुष्य युग यह सृष्टिक्रम है। इसलिये विधि पूर्वक औषधि बनाकर उसका यथायोग्य सेवन करना चाहिये। यथा—

पिप्पली औषधि।

पिप्पलीः क्षिप्तभेषजीः उतातिविद्धभेषजीः। तांदेवाः समकल्पयन् इयंजीवितवा अलम्॥ अथ० ६।१०९।१

"पिप्पली नामक औषधि क्षिप्त और अति विद्ध रोगी के लिये अत्यन्त उपयोगी है। यह एक ही औषधि (जीवातवै) जीवित रहने के लिये (अलं) पर्याप्त है ऐसी देवों ने कल्पना की है। जिस रोग में मनुष्य पागल सा बन जाता है उसको क्षिप्त कहते हैं और रोग से अत्यन्त घेरे हुये बीमार का नाम है अतिविद्ध। इसके लिए पिप्पली औषधि अत्यन्त उत्तम है, इतना ही नहीं परन्तु प्राणि मात्र के जीवन के लिये अर्थात् सपूर्ण आरोग्य प्राप्त करने के लिये यह एक ही औषधि पर्याप्त है।

अपामार्ग।

क्षुधामारंतृष्णामारंतथाअनपत्यताम्। अपामार्ग त्वयावयंसर्वंदपमृज्महे ॥१॥ अपामार्गओषधीनांसर्वासामे-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कइद्‌वशी । तेनतेमृज्मअ।स्थितसथत्वमगदश्चर ।।२॥

अथर्वण वेद में आया है कि "क्षुधा तृष्णा तथा अनपत्यता सम्बन्धी सर्व व्याधि इस औषधि के सेवन से दूर होते हैं।"

रोहिणी ।

"रोहिण्यसिरोहिण्यस्थ्नस्यछिन्नस्यरोहिणी। रोहये-दमरु धति । संतेमज्जामज्जा भवतुसम्रुतेपरुषापरुः । संतेमांसस्यविस्त्रस्तंसमस्थ्यमपिरोहतु ॥" लोमलोम्ना-संकल्पयात्वचासंकल्पयात्वचम् ॥ असृक्ते अस्थिराहतु-छिन्नसंधेहिओषधे ॥ अथर्वणकां०४सू०१२ ॥

(अर्थ)—रोहिणी टूटी हुई हड्डी को जमाने वाली है। मज्जा से मज्जा. मांस से मांस, रोम से रोम, त्वचा से त्वचा रक्त को रक्त से मिलाने वाली है। कटे को जोड़ती है। अन्य औषधियाँ यथा :—

नक्तंजातास्योषधेरामेकृष्णेअसिक्नच । इदंरजनि-रजयकिलासंपलितंचयत् ॥ किलासंचपलितंचनिरितो-नाशयापृषत् । आत्वास्वोविशतांवर्णःपराशुक्लानिपातय ॥ श्यामासरूपंकरणीपृथिव्याअध्युद्धृता । इदमूषुप्रसाधय-पुनारूपाणिकल्पय ॥ अथ० ॥ कां० १ सू० २२, २३, २४ ।

अर्थात् रामा, कृष्णा, असिक्नि, रजनी, सुपर्ण, श्यामा, पृथिवी ये औषधियाँ किलास (एक प्रकार के श्वेत कष्ट को कहते हैं जिसमें लालिमा रहती है) और पलित रोग (सर के

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
केश असमय पक कर सफेद हो जाने को कहते हैं) को नष्ट करने वाली कही गई है। अर्थात् किलास को नाश करती हैं, श्वेत को नाश करती हैं, त्वचा को सुन्दर करती हैं।

औषधियों के प्रचलित नाम।

१—रामा=घीकुआर, अशोक।

२—कृष्णा=पीपर, कुटकी, बकुचो, पर्पटी, गुलाब का फूल और गम्भारी।

३—असिक्नी=नहीं मालूम कोई विद्वान् वैद्य इसका पता लगावें।

४—रजनी=हल्दी, दारहल्दी।

५—सुपर्ण=ढाक (पलास) का फूल, फल व छाल, [सुपर्ण—ढाक वनस्पतियों को रूप देता है इसके फूल से जंगल शोभायमान हो जाता है]

६—श्यामा=[पीपर, हल्दी] गुरुच, नीलदूब, नीली, अनन्तमूल, तुलसी, शीशम, कमलगट्टा।

७—पृथिवी वा पृथ्वी=बड़ी इलायची।

८—रोहिणी=हर्रे, मजीठ, (गम्भारी) बान्दा जो आम आदि वृक्षों पर लाल पीला फूलवाला जमता है।

इनमें जितनी औषधियाँ हैं सब रुधिर नाशक, व्रण=फोड़ा, फुन्सी के दूर करने वाली तथा कुष्ट नाशक हैं। इस कारण सबके सब सरूप करणी=सुन्दर रूप करने वाली हैं। अब किलासादि कुष्ट के लिये योग निम्न प्रकार हुआ।

१–बड़ी हर्रे का छिलका, २–मजीठ, ३–पीपर, ४–हल्दी, ५–दारहल्दी, ६–कुटकी, ७–बकुची का बीज, ८–बड़ी इलायची, ९–पर्पटी (पपरिया) १०–गुरुच, ११–गम्भारी का फल,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१२-नीला दूब, १३-नीली जिसका नील रंग बतता है, १४-घीकुआर का गुद्दा, १५-अनन्तमूल, १६-तुलसी, १७-बान्दा, १८-गुलाब का फूल, १९-अशोक की छाल, २०-बुरादा शीशम, २१-ढाक का फूल, २२-कमल गट्टा । सब औषधियाँ समान भाग लेकर दिन-रात पानी में फूलने देना और भभका यन्त्र में अर्क खींच लेना । वैद्य अपनी बुद्धि से इनकी मात्रा आदि में हेर-फेर करके इस योग को शतवीर्य सौगुना लाभदायक और सहस्र वीर्य—हजारगुना लाभदायक बना सकते हैं ।

पिंग (पिली सरसो)

अजुजिघ्रं प्रमृशन्तंक्रव्यादमुतरेरिहम् । आरायांछ्व-किष्किणोवजःपिंग्नोअनीनशन् ॥ अथ० ८।३।६

जो हिंसक जीव सूँघ कर व स्पर्श करके मारने वाले, कच्चे मांस व छोटे कीड़ों को खाने वाले और चाट कर मारने वाले अन्य दरिद्रों को जो कुत्तों के समान किश-किश करते हैं उन सबों का पीली सरसो नाश करती है । अर्थात् पीली सरसो के खाने व होम करने से अदृश्य विषधारी जन्तु जो सूर्य के ताप को नहीं सह सकते नष्ट हो जाते हैं ।

यस्तेगर्भं प्रतिमृशाञ्जवा मारयातिते । पिंगस्तमुग्र-धन्वाकृणोतिहृदयाविधम् ॥ अथर्व ६।१०।१८

हे गर्भवती तेरे गर्भ को जो जन्तु दुःख दे वा तेरे उत्पन्न बच्चे को मार डाले जो तीव्रता से दौड़ने वाला है उस जन्तु को सरसों हृदय से विधाकरे अर्थात् नष्ट कर देवे । ऐसे कीड़े गन्ध विशेष से नष्ट किये जाते हैं ।

पाठक महोदय ! पूर्व लिखित मुख्यतया चार चिकित्साओं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में गौड़ रूप से सात प्रकार के चिकित्साओं का उल्लेख प्राप्त किये होंगे यथा—(१) मानस चिकित्सा (२) वायु चिकित्सा (३) सौर चिकित्सा (४) अग्नि चिकित्सा (५) हवन चिकित्सा (६) जल चिकित्सा (७) औषधि चिकित्सा इत्यादि। वेद की इन चिकित्सा—पद्धतियों को सूक्ष्म-विचार करने से पता लगता है कि वेद भगवान् सम्पूर्ण व्याधियों को दूर करने के लिये इन उपरोक्त सात चिकित्साओं में दो प्रकार की अर्थात् सूक्ष्म और स्थूल क्रियाओं द्वारा विधि बतलाये हैं। प्रथम अवस्था में मनुष्यों की औषधि, वनस्पतियां, दवाइयां, गोलियां आदि पर विशेष रहती हैं। यह बिल्कुल स्थूल भक्ति है। इस कारण जो वैद्य मन की चिकित्सा करने के बिना ही शरीर में दवाइवां ठोस देते हैं वे स्थूल दृष्टि के वैद्य होते हैं, जब तक मन कमजोर और दूषित न होगा तब तक कोई बीमारी हो ही नहीं सकती। इसलिये प्रत्येक रोगी के मन की चिकित्सा प्रथम होना आवश्यक है।

मानस चिकित्सा

वेद में इस मानस चिकित्सा पर जितना बल दिया है उतना अन्य चिकित्साओं पर नहीं दिया। इस चिकित्सा में जैसी स्वाधीनता होती है वैसी किसी अन्य चिकित्सा में नहीं हो सकतीं। यह चिकित्सा अपने आत्मिक बल से और मन की इच्छा शक्ति से ही होती है। यदि किसी प्रकार रोगी में आत्मिक बल उत्पन्न हुआ, अथवा चिकित्सक ने अपनी इच्छा शक्ति द्वारा उसमें बल उत्पन्न किया तो वहां ही स्वयं रोग का शमन होने लगता है। यजुर्वेद अ० ३४ में मन के गुणों का वर्णन अर्थात् मन की शक्ति निम्न प्रकार वर्णन की है:—

(१) यत्प्रजासुअन्तःअमृतं—जो मन प्राणियों के अन्दर अमृत रूप है। अमृत का सेवन करने से सब बीमारियां दूर होती

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। यदि योग द्वारा इस मन की शक्ति का विकास हो गया तो आरोग्य के लिये किसी अन्य पदार्थ के आश्रय की आवश्यकता ही नहीं होगी।

(२) यस्मान्नऋतेकिंचनकर्मक्रियते—जिस मनके बिना कोई भी कर्म किया ही नहीं जाता। यहाँ बाह्य कर्म की अपेक्षा शरीर के अन्तर्गत कर्मों की ओर ही पाठक ध्यान देवें। हाथ ऊपर करना, पेट में पाचन का कर्म आदि सब मनकी प्रेरणा से ही हो रहा है। जिस मन की शक्ति द्वारा चार पांच सेर वजन का हाथ जैसा चाहिये वैसा घुमाया जाता है, उस मन की शक्ति से रोग के थोड़े से बीज अपने स्थान से हिलाये नहीं जायेंगे, ऐसा कोई भी नहीं कह सकेगा। अपने सब शरीर में मन की ही शक्ति कार्य कर रही है, परन्तु मनुष्य अपनी ही शक्ति से अपरिचित होने के कारण अपने स्वास्थ्य के लिये दूसरों पर निर्भर हो रहा है वास्तव में दिव्य वैद्य आत्मा ही है और अमृत रूपी मन उसी के पास है। परन्तु अमृत के महासागर में डुबकी मारने वाले मूढ़ के समान यह भी अपने पास के अमृत को छोड़ कर बाहर के पदार्थ कष्ट से प्राप्त करने में आनन्द मानता है !!!

(३) 'येनसप्तहोतायज्ञःतायते'—जिस मन के द्वारा "सप्त होता यज्ञ" फैलाया जाता है। दो आँख, दो कान, दो नाक और एक मुख ये सात होता गण जिसमें बैठे हैं, ऐसी यह पुरुष रूपी यज्ञ मनके द्वारा ही चलाया जाता है। इस यज्ञ में मन ही ब्रह्म है और ब्रह्मा का काम यही है कि वह यज्ञ के दोषों को दूर करें। यह मन रूपी ब्रह्मा का अधिकार ही है। तात्पर्य-शरीर के सब दोष मन के द्वारा दूर किये जा सकते हैं। दोष दूर होने पर कोई रोग रहेगा ही नहीं। जब तक दोष होंगे तब तक ही रोग होते हैं।

(४) 'सुषारथिःअश्वानिव०'—उत्तम सारथी जिस

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकार घोड़ों को चलाता है उस प्रकार यह मन मनुष्यों को चलाता है। यह उसकी महती शक्ति है। परन्तु मनुष्य अज्ञान के कारण अपनी शक्ति से ही अपरिचित हो गये हैं !! अपने आप को निर्बल मानने में ही धन्यता मान रहे हैं !!! क्या यह सबसे बड़ा आश्चर्य नहीं ?

तात्पर्य– मनकी अजब शक्ति है। इस लिये मानस-चिकित्सा ही सब से श्रेष्ठ चिकित्सा है। इससे अपने तथा दूसरों के भी रोग दूर किये जा सकते हैं। हस्तस्पर्श द्वारा राग दूर करने का विधान निम्न मन्त्र में है—

हस्ताभ्यांदशशाखाभ्यांजिह्वावाचःपुरोगवि । अनामयित्नुभ्यांत्वाताभ्यांत्वोपस्पृशामसि । ऋ० १।१३७।७

"दश शाखाएँ जिसकी हैं ऐसे मेरे दोनों हाथों से तुमको स्पर्श करता हूँ। ये मेरे हाथ (अनामयित्नुभ्यां) निरोगता करने वाले हैं और साथ ही मैं (वाचः) अपनी वाणी को प्रेरित करता हूँ।"

"दश अँगुलियां हाथों की दश शाखायें हैं। इनके स्पर्श से दूसरे के रोग दूर हो सकते हैं। वाणी से भी साथ-साथ रोगी को सूचना देनी चाहिये। मानस चिकित्सा का प्रकार इस उक्त मन्त्र में लिखा है। वेद की विविध चिकित्सा-पद्धतियों का सूक्ष्म विचार करने से पता लगता है कि वेद इन चिकित्सा-पद्धतियों द्वारा मनुष्य को स्थूल से सूक्ष्म तत्व तक ले जा रहा है। सच्चे धर्म का यही मुख्य अभीष्ठ है कि वह मनुष्यों को स्थूल की अपेक्षा सूक्ष्म शक्तियों के विषय में अधिक प्रेम उत्पन्न करे, क्योंकि सूक्ष्म का सामर्थ्य स्थूल की अपेक्षा कई गुणा अधिक है पुनः लिखता हूँ कि प्रथम अवस्था में मनुष्यों की भक्ति औषधि वनस्पतियां, दवाइयां, गोलियां आदि पर विशेष रहती है। यह बिल्कुल स्थूल की भक्ति है। इस कारण जो वैद्य मन की चिकित्सा करने के बिना

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही शरीर में दवाइयां ठूँस देते हैं वे स्थूल दृष्टि के वैद्य होते हैं। मन के अधीन ही सब शरीर होता है। जब तक मन कमजोर न होगा तब तक कोई बीमारी मनुष्य को हो ही नहीं सकती। इस लिये प्रत्येक रोगी के मन की चिकित्सा प्रथम होना आवश्यक है। यह बात कई सूक्ष्मदर्शी अमेरिकन तत्वान्वेषियों के ध्यान में आ चुकी है, उनमें से एक कहता है।

In the herolc days of Veda the physician of the body was also the physician of the mind [Dr. Axil Emil gibsons Health culture, Vol. XXVI, No. V, may 1920]

"वेद के शौर्य--वीर्य युक्त ओजस्वी समय में शरीर का जो वैद्य होता था, वह मन का भी चिकित्सक हुआ करता था।" यह म० गिब्सन महोदय का कथन बिलकुल सत्य है। इसमें आश्चर्य की बात इतनी ही है कि जो बात म० गिब्सन को विदित हो गई, वह अब तक यहाँ के हिन्दू अथवा आर्य देशीय वैद्यों और हकीमों को विदित नहीं हुई !!!

वेद यद्यपि औषधि चिकित्सा बता रहा है, तथापि उसका सब आकर्षण सूक्ष्म मानस चिकित्सा पर ही हो रहा है। वैद्य का लक्षण ऋग्वेद में वर्णन निम्न प्रकार किया है---

ओषधयःसंवदन्तेसोमेनसहराज्ञा। यस्मैकृणोतिब्राह्मण-स्तंराजन्पारयामसि ॥ ऋ० १०।९७।२२

"औषधियाँ सोम राजा के साथ बोलती हैं कि, हे राजन् (यस्मै) जिस रोगी के लिये (ब्राह्मणः) ब्रह्म का ज्ञान धारण करने वाला वैद्य हमारी योजना करता है, (तं) उस रोगी को रोग से हम पार कर देते हैं। इस मंत्र में वैद्य का एक मुख्य लक्षण बताया है, वह यह है कि, "वैद्य सच्चा ब्राह्मण होना चाहिये अर्थात् ब्रह्म का ज्ञान वैद्य को चाहिये।" आत्म ज्ञानी वैद्य चाहिये। आत्मा, बुद्धि, मन आदि सूक्ष्म तत्वों के गुण धर्म जानने वाला

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही वैद्य बने। अन्यधनार्थी लोग वैद्य का धंदा न करें। वैद्य का वास्तव में दैवी धंदा है परन्तु लालच के कारण अन्य धंदों के समान यह धंदा भी विशेषकर राक्षसी बनाया गया है। आत्म ज्ञानी वैद्य आज कल किसी पवित्र भूमि में बिरला ही होगा। ऋग्वेद मं० १ सूत्र ४३ मं० ४ में तीन प्रकार के वैद्य कहे हैं-- गाथपति, मेधपति और जलाष-भेषज ।

(१) 'गाथपति'--गैशब्दे--गैधातु का अर्थ शब्द करना है। इससे गाथ बनता है ऐसा ही एक मत है। गाथ का अर्थ (A song) गायन ऐसा है। गाने वाला गायक, ऐसा अर्थ होता है। गायन से रोगी को [Hypnotic sleep] योग निद्रा में सुलाकर अपनी इच्छाशक्ति की प्रेरणा द्वारा रोग दूर करने का योग के प्रक्रियाओं में है (२) 'मेधपति'—मेध शब्द का अर्थ [Juice, sap, essence] सत्व; सत्, अर्क. क्षार, [३] 'जलाष-भेषज'—"जलाष" का अर्थ [water] जल [healing soothing] आराम देना, प्रसन्न करना। जलाष-भेषज, शब्द; जल चिकित्सक वैद्य, जो (Hydropachist) जल से चिकित्सा करता है। इन तीन प्रकार के वैद्यों में प्रथम 'गाथपति' जो अपनी इच्छा शक्ति की प्रेरणा द्वारा रोगों की निवृत्ति करने का प्रयोग करता है सर्वोत्तम माना गया है। पश्चात् दूसरे और तीसरे प्रकार के वैद्य की गणना की है।

आकर्षण (इच्छाशक्ति) द्वारा मानस प्रयोग।

योग मंडल 'गुरुकुल' काशी के योग-साधन माला द्वारा प्रकशित पुष्प २ मनोयोग 'हिप्नाटिज्म' (उत्तरार्द्ध) पृ० २० में लिख आये हैं कि, मानसिक एकाग्रता की मानसिक चिकित्सा भी कह सकते हैं। इच्छाशक्ति मस्तिष्क को गति देती है। विचार उत्पत्ति परमाणुमयी है। विचार शक्ति को संसार का कोई भी पदार्थ इसके आकर्षण को रोक नहीं सकता, चाहे इसको और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसकी अभिलिषित वस्तु के बीच कैसी ही बाधा क्यों न हो। विचार भी प्रकाश के सदृश ही 'ईथर' शून्य देश (अन्तरिक्ष) में से भेजा जाता है। जैसे जल में पत्थर फेंकने से तरंग माला उत्पन्न होती वैसे ही ये लहरें होती हैं मस्तिष्क के केन्द्र स्थान में गति बहुत प्रचण्ड है। किन्तु वही यह स्थिरसा देख पड़ता है। उस केन्द्र से विचार उसी प्रकार बाहर की ओर निकलता है जैसे कि हमारी शक्ति के केन्द्र स्थान सूर्य्य से प्रकाश विकीर्ण होता है। इस क्रिया से विचार भूमंडल के एक स्थान से ढकेल कर दूसरे स्थान तक भेजा जाता है।

सम्पूर्ण संसार में एक विद्युत् शक्ति विद्यमान् है जो एक की दूसरे पर असर करती है वह मनुष्य में सब से अधिक होती है फिर मनुष्यों में भी किसी में न्यून किसी में अधिक परन्तु अभ्यास से अधिक उत्पन्न की जा सकती है (अभ्यास की विधि यो० सा० मा० के पु० १, २ में लिखा जा चुका है) प्रयोजक (आमिल) यदि स्वयं अभ्यास में मज़बूत होगा तो रोगी पर असर कर सकेगा अन्यथा स्वयं बीमार हो जावेगा। प्रयोजक में निम्न प्रकार गुणों का होना परमावश्यकीय है यथाः—

(१) प्रवल इच्छा रोगी को लाभ पहुँचाने की, (२) मनुष्य मात्र से सहानुभूति, (३) ईश्वरीय भय (४) शुद्ध हृदय (५) स्वच्छ शरीर, (६) विद्वान, (७) रोगी में चुम्बकीय (मक़नातीसी) सम्बन्ध।

मानसचिकित्सा का साधारण प्रयोगविधि।

१—रोगी के पीछे खड़ा होकर उसके बालों की गन्ध सूँघे यदि स्वच्छ हो तो अपने समान समझे यदि बुरी मालूम हो तो समझे कि उस पर कुछ असर न होगा। स्त्री का पुरुष पर और पुरुष का स्त्री पर शीघ्र प्रभाव होता है।

२—जब ताकत देना या रोग को निकालना हो तो प्रातः कार्य

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिये ठीक है परन्तु नींद लाने को या दर्द दूर करने को सायं-काल उत्तम है।

३—जहां पर प्रयोग किया जावे वह स्थान बिलकुल एकान्त हो और स्वच्छ वस्त्र हल्के हों या न हों तो भी अच्छा है। रेशम का वस्त्र पहनना मना है।

४—१५ मिनट से अधिक समय प्रयोग करने में नहीं लगाना चाहिए।

५—आकर्षणीय कार्य में इस बात का ध्यान रहे कि रोगी के बांये शरीर के भाग पर प्रयोजक (आमिल) का दक्षिण (दाहिना) हाथ काम करे और दाहिने पर बांया हाथ। प्रयोजक के हाथों के पोटुए रोगी के अङ्गों के किनारे पर झुकाये जावें। आरम्भ व अन्त की ओर झाड़े। पट्टों की ओर ऊपर से नीचे की ओर को दिये जावें जैसे कंधों से उंगलियों की तरफ कूल्हे से पांव की ओर या सर की चोटी से पाँव की ओर उसी प्रकार से कि अन्त में हाथ पृथक झाड़ दिया जावे, मानों रोग शरीर से खीच (सूत) कर पृथक् झाड़ दिया।

६—प्रयोजक रोगी के दाहिनी ओर खड़ा होकर अपना सीधा हाथ सामने और बांया उसके सिर के पीछे लगाकर सिर को कुछ काल थामे रहे, थोड़े मिनट के पश्चात् इसी प्रकार गर्दन को झाड़ दे, फिर सामने खड़ा होकर उसका सीधा हाथ अपने सीधे हाथ में लेकर और अपना बांया हाथ बीमार के कन्धे पर रखकर हाथों की उँगलियों तक झाड़ा दे बाजुओं को धीरे से छूकर दस मिनट तक प्रत्येक वार हवा में हाथ को झाड़ देवे, फिर आकार एक धनुष सा बनाते हुए, फिर कन्धे से आरम्भ करके, इसी प्रकार फिर रोगी के बाएँ हाथ पर अपने सीधे हाथ से फिर दाहिनी ओर खड़ा होकर दोनों हाथों से रोगी के कमर छाती और पेट पर यह कार्य करे बार-बार हवा में हाथों को झाड़ कर और फिर आकर सिर की ओर लाकर, फिर रोगी का सीधा पाँव अपने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीधे हाथ में ले। और बायें हाथ से नीचे की ओर को झाड़ देवे फिर बाएँ पाँव पर इसी प्रकार सीधे हाथ से–झाड़ा जितना अधिक या कमजोर का देना स्वीकार हो उतना ही हाथ शरीर से लगाकर समीप या दूर रक्खे जावें।

७—हाथ जितना दूर रक्खा जावेगा उतना आकर्षणीय कार्य अधिक जोर का होगा। जहाँ दर्द हो वहाँ फूँक मारना आवश्यक है।

रोगों की निवृत्ति।

उपरोक्त आकर्षणीय क्रियाओं द्वारा अपस्मार (मिर्गी) दर्द सर, बेहोशी (गश्ती) सरसाम कान व आँख के रोग, दाँत का दर्द, जलन, घाव, ड़िब्बा रोग. खाँसी, दमा, सूजन, छाती का दर्द, आमाशय की बीमारी, फोड़ा, गठिया, जोड़ों की निर्बलता, मस्तिष्क की निर्बलता, कंपवायु, कुबड़ापन, बहुमूत्र, खराबी जिगर (दिल) व गुरदा ज्वर इन रोगों को आराम पहुँचता है।

सुगम चिकित्सा।

संसार में आधे से ज्यादा रोग, खाने-पीने में प्राकृतिक नियमों का उल्लंघन करने से होते हैं, इसलिये यह बात स्मरण रखनी चाहिये कि सिवाय प्राकृतिक चिकित्सा के संसार में और कोई चिकित्सा या औषधि नहीं है, जो उन रोगों का समूल नाश कर सके। इसलिये हमारा कर्त्तव्य है कि हम प्रकृति के नियमों के अनुसार चलें, जिससे कि हम सम्पूर्ण स्वास्थ्य का उपभोग कर सकें।

सर्वदा स्वस्थ रहने के प्राकृतिक नियम।

(१) श्वासोच्छ्वास क्रिया (प्राणायाम) विधि अनुसार वैसा ही प्रतिदिन प्रातः सायं करना चाहिए जिस प्रकार दोनों समय भोजनादि करते हैं।

(२) प्रातःकाल, शीघ्र भोजन करने की अस्वाभाविक और रोग उत्पन्न करने वाली आदत सदैव के लिये छोड़ देना। ऐसा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने से स्वाभाविक भूख लगेगी।

(३) कोई दिन कैसा भी कारण क्यों न आ पड़े, बिना स्वाभाविक भूख लगे भोजन न करना।

(४) जब तक स्वाद आता रहे, तब तक भोजन का प्रत्येक ग्रास चबा-चबा कर खाना।

(५) भोजन करते समय, जल तथा अन्य प्रवाही पदार्थ न पीना।

आरोग्य जीवन व्यतीत का ये सत्य और शास्त्रीय नियम हैं। शरीर और मन को सम्पूर्ण स्वास्थ्य में लाने के लिये, तुम्हारे ये पहले कर्त्तव्य हैं। इन कर्त्तव्यों के करने और स्वास्थ्य तथा जीवन के मार्ग पर चल निकलने के पश्चात्, तुम में नया प्रकाश उत्पन्न होगा और जैसे-जैसे तुम आगे चलोगे, तैसे-तैसे शरीर और मन पुष्ट तथा मजबूत बनते जायेंगे, और वे यहाँ तक पुष्ट होते जायेंगे कि आप ही कहने लगोगे कि "मैं अब सम्पूर्ण स्वास्थ्य का उपभोग करता हूँ।" प्रकृति के नियमानुसार स्वाभाविक भूख लगने पर ही, दिन में एक या दो बार खाने से और कितने ही कठिन रोगों में कई दिनों तक जब तक कि स्वाभाविक भूख न लगे उपवास करने से पित्त विकार, सिर दर्द, बदहजमी, गठिया, पेट और अंतड़ियों के दर्द, जलोदर, कमजोरी व अशक्ति, क्षयरोग, दमा, लकवा, चक्कर का आना, ज्वर, गले-फेफड़े-और छाती तथा मुत्रपिंड के रोग इत्यादि सम्पूर्ण व्याधियें बिना किसी औषधि के सेवन से स्वयं दूर हो जावेंगे।

प्रत्येक मनुष्य के लिये अपना स्वास्थ्य बनाये रखने की इच्छा और प्रयत्न करना केवल परम आवश्यक ही नहीं बल्कि बहुत ही स्वाभाविक भी है। पर इस इच्छा की पूर्ति और प्रयत्न की सफलता बहुत ही थोड़े लोगों के भाग्य में होती है। दिन पर दिन रोगों और रोगियों की संख्या इतनी बढ़ती जाती है कि पूर्ण रूप से स्वास्थ्य मनुष्य ढूंढ़ निकालना बहुत ही कठिन हो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया है। यहाँ तक कि बहुत पहले ही इस देश में 'शरीरं व्याधि मन्दिरम्' का सिद्धान्त बनाया जा चुका है। पर वास्तव में यह बात नहीं है। शरीर स्वयं कभी व्याधि मन्दिर नहीं होता, उसकी प्रवृत्ति सदा नीरोग होने या रहने की ओर होती है, पर हम अहार-विहार आदि के प्राकृतिक नियमों का उल्लंघन करके स्वयं उसे व्याधि मन्दिर बना लेते हैं। प्राणिमात्र में सर्वश्रेष्ठ गिने जाने वाले मनुष्य के लिये यह बात बहुत ही लज्जास्पद है। इससे भी अधिक लज्जास्पद आजकल की वह प्रचलित दूषित प्रथा है जिसकी सहायता से व्याधि को शरीर से बाहर निकाल देने का प्रयत्न किया जाता है जिस शरीर में अपने आपको स्वयं निरोग कर लेने की सबसे बड़ी शक्ति विद्यमान हो, उसे तरह-तरह के विषों के प्रयोग से निरोग करने का प्रयत्न करना कभी लाभदायक नहीं हो सकता।

शरीर को अरोग्यता प्राप्त करने का सबसे अच्छा अवसर उसी समय मिलता है जब कि उसकी सारी शक्तियों को सब तरह के भारों से छुट्टी मिल जाय और यह छुट्टी लंघन या उपवास की सहायता से ही मिल सकती है। जिस भोजन का काम हमारे शरीर के अङ्ग-प्रत्यङ्ग को पुष्ट करता है, वह हमारे अङ्ग-प्रत्यङ्ग के रोगों को भी अवश्य ही बढ़ाता जायगा, क्योंकि 'वृद्धि और पुष्टि करना' ही उसका स्वाभाविक धर्म है। भोजन करते रहने के अतिरिक्त जहाँ औषधियों आदि की सहायता से उसके कार्य्यों में और भी विघ्न डाला जाता है वहाँ का रक्षक ईश्वर ही है। आयुर्वेद में 'लंघनं परमौषधम्' इसीलिये कहा गया है कि उससे शरीर को अपनी स्वाभाविक और आरोग्य स्थिति तक पहुँचने में बहुत अधिक सहायता मिलती है। प्रत्येक रोग से उपवास की सहायता से जितनी जल्दी छुटकारा मिलता है उतनी जल्दी और किसी उपाय से नहीं मिल सकता। उपवास चिकित्सा रोगों के प्रारम्भ समय में करना लाभदायक होता है। अब प्राणायाम द्वारा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा के विषय में लिखा जायगा। जहाँ तक हो सके स्थूल से सूक्ष्म चिकित्सा की ओर विशेष भक्ति रख कर उससे लाभ उठाना चाहिये।

प्राणायाम चिकित्सा क्या है ?

१—अष्टाङ्ग योग में प्राणायाम चौथा अङ्ग आया है, प्राणायाम का अर्थ श्वास और प्रश्वास दोनों की गति का अवरोध (रोक) है। और उन दोनों श्वास-प्रश्वास के रोकने से जिन रोगों की चिकित्सा की जावे उसे प्राणायाम चिकित्सा कहते हैं।

२—योग साधन में जिस प्रकार मन महाराज को काबू में करने के लिये प्राणायाम अत्युपयोगी साधन रक्खा गया है उसी प्रकार शारीरिक और मानसिक व्याधियों को हटाने में भी प्राणायाम अर्थात् श्वास और प्रश्वास की गति अवरोध द्वारा एक मुख्य साधन समझना चाहिये।

३—जो वायु बाहर से भीतर को आता है, उसको श्वास और जो भीतर से बाहर जाता है उसको प्रश्वास कहते हैं। उन दोनों को जाने आने के विचार से रोके।

४—श्वास प्रश्वास के गति अवरोध क्रिया को जानने से पूर्व स्वर शास्त्र [स्वरोदय विज्ञान] जो भारतवर्ष की प्राचीन विद्या है उसके तत्व को प्रथम जानना परमावश्यक है।

५—जिस प्रकार मेस्मेरिज़म—हिप्नाटिज़म आदि विषयों की प्रवीणता के लिये योग सम्बन्धी नियमों के बर्ताव करने की अत्यावश्यकता होती है, उसी प्रकार स्वर विज्ञान में भी विशेष पटुता प्राप्त करने के लिये योग सम्बन्धी नियमों को बर्ताव में लाने की आवश्यकता है। विषय प्रत्येक अंगों का भिन्न भिन्न हो परन्तु मूल एक ही है।

६—यहाँ पर स्वर विज्ञान (स्वरोदय) का मतलब है मनुष्य देह की श्वास क्रिया से। श्वास क्रिया का जीवन से कितना

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घनिष्ट सम्बन्ध है इसे प्रत्येक विचारशील पाठक जान सकते हैं।

७—श्वास क्रिया प्रत्येक जीवित प्राणियों में जन्म से आमरण तक पाई जाती है। स्वासोच्छ्वास शरीर के फुप्फुस (फेफड़ों) की क्रिया है जो इन्द्रिय विज्ञान (Physiology) की प्रधानतम इन्द्रिय हैं।

८—श्वासोच्छ्वास से हमारे शरीर में वायु तत्व का आवागमन होता रहता है। जिसे प्राणप्रद्वायु और प्राणनाशक वायु कहते हैं।

९—श्वास लेने में जीवनी शक्ति (प्राणों) का शरीर में नित नया प्रवेश होता रहता है। जिसके कारण रक्त विष्करण होकर (दुषित) तत्व (कार्बन) श्वास छोड़ने में शरीर के बाहर हो जाता है। इस प्रकार की क्रिया अव्याहृत रूप से जीवित शरीर में आदि से अन्त तक होती रहती है। इसी श्वासोङ्छ्वास की क्रिया पर जीवन, मरण और स्वास्थ्य निर्भर है। जिसे प्राचीन और अर्वाचीन सभी शरीर तत्वज्ञों ने गम्भीर गवेषणा से सिद्ध किया है।

१०—श्वास भीतर लेने की स्वाभाविक स्थिति नाभी से कण्ठ तक है तुरन्त के जन्मे हुए बालक और योगीजन इसी प्रकार पूर्ण और दीर्घ श्वसन क्रिया करते हैं। जिससे नाभि से लगाकर फेफड़े के ऊपरी भाग कण्ठ क सब श्वास केन्द्र और मार्ग पूर्णतया भर जाते हैं। परन्तु इस प्रकार की श्वास क्रिया बहुत स्थिरता से की जाती है। जोर जल्दी को बिल्कुल स्थान नहीं दिया जाता।

११—इस प्रकार पूर्ण श्वास लेने में इसके पूर्व छोड़ा हुआ प्रश्वास नाभि से हृदय को स्पर्श कर फेफड़ों में पहुँचता है अर्थात् शिराओं (नाड़ियों) के मार्ग से शरीर के सम्पूर्ण भाग से गंदला रक्त हृदय कमल में प्रश्वास के द्वारा आता है और प्राण तत्व को लेकर श्वास रूप में फेफड़ों में प्रवेश करता है। इस हालत में हृदय कमल में एकत्रित हुआ दूषित रक्त परिष्कृत होकर धमनियों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के मार्ग से अखिल शरीर में प्रवेश होकर शरीर को पुलकित करता है। इस प्रकार की क्रिया शरीर में प्रत्येक सेकिंड में हुआ करती है। अगर यह क्रिया शरीर में कुछ मिनटों के लिये न हो तो मनुष्य की तत्काल मृत्यु हो जाती है।

१२—इस श्वास क्रिया की भिन्न-भिन्न गति को जान लेना ही स्वरोदय या स्वर विज्ञान है। इसके सहारे समस्त मानसिक विकारोत्पन्न शुभाशुभ, हानि, लाभ, भूत भविष्यत् और वर्तमान का ज्ञान प्राप्त हो सकता है। आपत्तियों से शीघ्र ही छुटकारा मिल जाता है। होनहार बीमारी का हाल सवेरे बिस्तर से उठते ही मालूम हो जाता है। बीमारी से भी शीघ्र ही पिंड छूट जाता है।

१३—नाड़ी परीक्षा का विषय स्वरोदय विज्ञान के समझे बिना प्रायः अपूर्ण ही है। हम पहले लिख आये हैं कि श्वास प्रश्वास की क्रिया पर ही जीवन-मरण और स्वास्थ्य अस्वास्थ्य निर्भर है।

१४—अर्थात् स्वाभाविक श्वासोच्छ्वास शरीर को तन्दुरुस्त रखता है और अस्वाभाविक श्वासोच्छ्वास से शरीर में रोग पैदा होते हैं। जिस देहधारी की श्वास प्रश्वास क्रिया नष्ट हो जाती है, वह अवस्था मृत्यु कहलाती है।

१५—श्वासोच्छ्वास की स्वाभाविक गति यह है कि मनुष्य दीर्घ और पूर्ण श्वासोच्छ्वास करता रहे। अपूर्ण और जल्दी-जल्दी श्वासोच्छ्वास होना अस्वाभाविक गति है। इस तरह अस्वाभाविक श्वास क्रिया से मनुष्य शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त होता है। जल्दी श्वास का चलाना मृत्यु को निमन्त्रण देता है।

१६—श्वास की गति समझ कर कार्य करने में कभी निराश नहीं होना पड़ता। सब कामों में सफलता प्राप्त होती है। इस अनोखी तरकीब को नहीं समझने से ही हर एक कार्य असफल होते हैं और अनेक प्रकार की व्याधियाँ भुगतनी पड़ती हैं।

१७—आजकल स्वर विज्ञान का साहित्य बहुत कम उपलब्ध

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है अर्थात् नहीं के बराबर है। स्वरोदय विज्ञान प्रत्यक्ष फल देने वाला है। इसका फल अनुभव द्वारा ज्ञान हो सकता है। जिन्हें इस विषय के साधन की अभिलाषा हो उन्हें ध्यानपूर्वक श्वास-प्रश्वास की गति को समझने की चेष्टा करनी चाहिये।

नाड़ी भेद और नाड़ियों की उत्पत्तिस्थान।

१८—श्वास प्रश्वास के मार्गों की प्राचीन ग्रन्थों में नाड़ी संज्ञा है। बाहरी जगत् में जिस प्रकार सूर्य्य की उत्तरायण और दक्षिणायन ऐसी दो गति हैं। उसी प्रकार हमारे शरीर में भी निःश्वास की दो गति हैं। जिसे इडा और पिंगला कहते हैं।

१९—मनुष्य की नासिका के जब दाहिने नथने से श्वांस बाहर निकले तो उसे इडा नाड़ी सूर्य्य स्वर कहते हैं। और बायें नथने से श्वास बाहर निकले तो उसे पिंगला या चन्द्र स्वर कहते हैं।

२०—जिस प्रकार जगत् में सूर्य्य चन्द्र विद्यमान हैं। और नियम से अपना-अपना कार्य करते हैं। उसी प्रकार मनुष्य देह रूपी जगत् में सूर्य और चन्द्रस्वर विद्यमान हैं। और ये भी स्वस्थ शरीर में नियम से अपना अपना कार्य करते हैं।

२१—एक वर्ष में जिस प्रकार उत्तरायण और दक्षिणायन होते हैं, उसी प्रकार एक दिन में दिन और रात ऐसे दो भेद होते हैं। दिन उत्तरायण के समान और रात्रि दक्षिणायन के समान है।

२२—उत्तरायण में जिस प्रकार वसन्त, ग्रीष्म और वर्षा यह तीन ऋतु होती हैं। उसी प्रकार दिन के प्रथम भाग में अर्थात् सवेरे वसंत ऋतु दोपहर को ग्रीष्म ऋतु और सायंकाल को वर्षा ऋतु होती हैं। दक्षिणायन में जिस प्रकार शरद, हेमंत और शिशिर यह तीन ऋतु होती हैं। उसी प्रकार रात्रि के प्रथम भाग में शरद मध्य भाग में हेमंत और अंत भाग में शिशिर ऋतु होती है।

२३—उत्तरायण में या दिन में जिस प्रकार सूर्य की आदान

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ग्रहण) शक्ति बढ़ती है। उसी प्रकार मनुष्य के दाहिने नथने से श्वांस चलते समय अग्नि क्रिया की वृद्धि होती है। दक्षिणायन में या रात्रि के समय जिस प्रकार चन्द्रमा का सौम्य गुण या पोषण शक्ति बढ़ती है, उसी प्रकार बांए नथने से श्वांस चलते समय चन्द्रमा के सौम्य गुण अर्थात् पोषण शक्ति की वृद्धि होती है।

२४—जब नासिका के दोनों स्वर समान रूप से चलते हैं अर्थात् नाक के दोनों नथने से एक ही समय में श्वांस चलती है, उसको सुषुम्ना नाड़ी कहते हैं। स्वरोदय शास्त्र के मत से सुषुम्ना नाड़ी सर्व प्रधान है और यह नाड़ी मेरू दण्ड के आश्रित होकर रहती है।

२५—शरीर की सम्पूर्ण नाड़ी सुषुम्ना नाड़ी के आश्रित होकर रहती हैं। और इसी से उत्पन्न हुई हैं। इडा और पिंगला नाड़ी के बीच में सुषुम्ना नाड़ी स्थित है और यह त्रिगुणात्मिका अर्थात सत, रज और तम इन तीन गुणों वाली है। यथा:-

रजोगुणाचवज्राख्याचित्रिणीसत्वसंयुता।
तमोगुणाब्रह्मनाड़ीकार्यभेद क्रमेणच॥"

सुषुम्ना के मध्य में जो वज्राख्या नाम की नाड़ी है वह रजोगुण युक्त है। चित्रिणी नाड़ी सत्व गुण सम्पन्न है और ब्रह्म नाड़ी तमो गुण वाली है।

२६—नाभि कन्द से सम्पूर्ण नाड़ियों की उत्पत्ति है। परन्तु यह नाभि कन्द कहाँ है। इस विषय में शिव संहिता में लिखा है, कि गुदा द्वार के दो अंगुल ऊपर और मेढ़ू (लिंग) के दो अंगुल नीचे चार अंगुल चौड़ा मूलाधार पद्म है। इस मूलाधार पद्म की कर्णिका के बीच में एक त्रिकोण मण्डल सुशोभित है। इस प्रकार योगी जन अनुभव करते हैं! इस त्रिकोण मण्डल को योनि मण्डल कहते हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२७--इस योनि मण्डल के मध्य में विद्युल्लता (बिजली) के समान साढ़े तीन वलय वाली कुटिला (टेढ़ी) परमदेवता कुल कुण्डलिनी ब्रह्मपथ को रोक कर अवस्थान करती है। इस त्रिकोण योनि मण्डल में से उपरोक्त इडा, पिंगला और सुषुम्ना नाड़ी उत्पन्न हुई हैं मूलाधार पद्म में से और भी जो नाड़ियाँ निकलती हैं वह सब जीभ, लींग अण्डकोष, पाँव के अंगूठे, नासिका, नेत्रों के कोने, अंगुष्ठ, कान, गुदा और कुक्षि इत्यादि अंग प्रत्यंगों में जाकर अपने-अपने कार्यों को सम्पन्न करके फिर अपने जन्म स्थान को लौट आई हैं।

२८--शरीर की इडा पिंगला प्रभृति सम्पूर्ण नाड़ियाँ मूलाधार पद्म में स्थित कुण्डलिनी से उत्पन्न हुई हैं। किन्तु उदरस्थ चमड़े की बनी हुई नाभि से उत्पन्न नहीं हुई हैं।

२९--जिस प्रकार चर्म स्थित नाभि को नाभि कहते हैं उसी प्रकार संस्कृत में किसी भी पदार्थ के मध्य भाग को नाभि कहते हैं। जैसे चक्र नाभि अर्थात् चक्र का मध्य भाग।

३०-- सूर्य सारे जगत् में होने के कारण इसको सारे जगत् को नाभि [Center] कहते हैं। इस मनुष्य शरीर में चुम्बक के समान एक स्थिर मध्य स्थल का अवलम्बन करके जीवनी शक्ति क्रिया करती है!

३१—जिस प्रकार विराट् जगत् में १२ राशि हैं, उसी प्रकार मनुष्य शरीर भी १२ राशियों में विभक्त हैं। यथा:-

[१] 'मेष राशि'-मनुष्य शरीर का मस्तक।
[२] 'वृष राशि'-मुख।
[३] 'मिथुन राशि'-दोनों बाहु!
[४] सिंह राशि'-उदर।
[५] 'कन्या राशि'-कटि।
[७] 'तुला राशि'-वस्ति (इस स्थान के पीछे की तरफ त्रिकास्थि)।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८] 'वृश्चिक राशि'–गुह्य देश।
[९] 'धनराशि'–दोनः उरू।
[१०] 'मकर राशि'–ठोड़ी।
[११] 'कुम्भ राशि'–जंघा।
[१२] 'मीन राशि'–दोनों पाँव हैं।

तुला राशि जिस प्रकार राशि चक्र का मध्य स्थल है, उसी प्रकार शरीर के पीछे के भाग में जिस स्थल में त्रिक की अस्थि है वही स्थान शरीर का मध्य स्थल या नाभि है।

३२—अहि स्वरूपिणी [सर्प के समान सोती हुई] महा शक्ति कुण्डलिनी से २४ प्रधान नाड़ी उत्पन्न हुई हैं। उनमें १० नाड़ी ऊपर की तरफ गई हैं। और १० नाड़ी नीचे की तरफ गई हैं। दोनों नाड़ी बायीं तरफ तिरछी गई और नाड़ी दाहिनी तरफ तिरछी गई हैं। और हृदय में १०१ नाड़ियाँ गई हैं। उन १०१ नाड़ियों में से एक-एक की शाखा नाड़ियाँ फूटती हैं। जैसा कि प्रश्नोनिषद् में लिखा है।

३३—अर्थात् उन २ शाखा नाड़ियों की बहत्तर २ हजार प्रति शाखा नाड़ी में व्यान नाम प्राण बिचरता है। सम्पूर्ण मूल नाड़ी, शाखा और प्रतिशाखा नाड़ी मिल कर ७२७२१०२०१ नाड़ियाँ निकली हैं परन्तु उनमें उपरोक्त २४ ही मुख्य हैं।

३४—सुश्रुत संहिता के शरीर स्थान के नव में अध्याय में भी २४ नाड़ियों का उपरोक्त उल्लेख है, यथा—

ध्मानात् अनिल पूरणात् 'धनन्यः' वायु से भर कर ये फूलती है इससे इनको धमनी कहते हैं।

"चतुर्विंशतिर्धमन्योनाभिप्रभवाअभिहिताः।"

=धमनी चौबीस होती है और इन सब की उत्पत्ति नाभि से होती है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धमनियों की गति

"नासांतु नाभि प्रभवाणां धमनीनामूर्द्ध्वगा दशदश चाधो गामिन्यश्च तस्त्रस्तिर्य्यगाः ।" —ये धमनियाँ नाभि से प्रगट होकर १० ऊपर को दस नीचे को और चार तिरछी जाती हैं।

३६—इस मूलाधार त्रिकोण योनि कोहि शास्त्र में कूर्म्म कहते हैं दत्तात्रेय संहिता में लिखा है कि :—

"तिर्य्यक् कूर्मो देहिनां नाभि देशे वामे बलंतस्य पुच्छञ्च याम्ये। ऊर्द्ध्वे भागे हस्त पादौच वामो, तस्याधस्तात् संस्थितौ दक्षिणोतौ ॥ वल्ले नाड़ी द्वयं तस्य पुच्छे नाड़ी द्वयं तथा। पञ्च पञ्च करे पादे वाम दक्षिण भागयोः ॥"

—प्राणियों के नाभि देश में तिर्य्यक् भाव से एक कूर्म्म (कच्छप) की समान आकार वाला त्रिकोण है। नाभि के बायीं तरफ उसका मुख और दाहिनी तरफ उसकी पूछ है ऊपर की तरफ उसका बायाँ हस्त और बायां पैर है और नीचे की तरफ उसका दाहिना हाथ और दाहिना पैर है। इस कूर्म के मुख में दो नाड़ी, पूछ में दो नाड़ी और उसके प्रत्येक हाथ पैरों में ५—५ ऐसी सब मिलकर २४ नाड़ियाँ हैं।

३७—इन चौबीस नाड़ियों में इडा, पिंगला और सुषुम्ना यही तीन नाड़ी सब से श्रेष्ठ और महत्वपूर्ण है। इन्हीं के ऊपर स्वरोदय शास्त्र की मर्यादा भी है। श्वासोच्छ्वास क्रिया इन्हीं तीन नाड़ियों द्वारा होती है। शरीर में प्राणों का संचार इन्हीं तीन नाणियों से होता है।

ऊपर जाने वाली धमनियों के गुण कर्म भेद

३८—सुश्रुत संहिता के नवमें अध्याय में लिखा है कि ऊपर जाने वाली धमनियाँ शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, श्वास लेना निकालना, जम्हाई, क्षुधा, हँसना, कहना, रोना, आदि विशेष कर्मों को करती हुई शरीर को करती हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधोगामिनी दस धमनियों के गुणकर्म

३९—अधो भाग में जाने वाली धमनियाँ अधोवायु, मुत्र पुरीष, वीर्य-रज इत्यादि को नीचे ले जाती हैं और ये पित्ताशय में पहुँच कर तत्रस्थ अन्नपान रस को जो पित्ताशय की गरमी से पाक को प्राप्त हो जाता है बाहर निकाल देती है और शरीर को तृप्त करती है और ऊर्ध्वगामिनी और तिर्यग् गामिनी धमनियों को भी तृप्त करती है रस स्थान को रस से पूर्ण करती है, और पक्वान्न रस से मल मूत्र और पसीनों को पृथक करती है।

तिर्य्यग्गामिनी धमनियों का वर्णन

४०—जो धमनियाँ तिरछी जाती हैं वे चार हैं इन चारों के सौ, सौ के हजार उत्तरोत्तर इसी तरह विभाग चले जाते हैं। इसी प्रकार इन असंख्य धमनियों से यह गवाक्षित (जाल के सदृश) देह बना हुआ है। इन धमनियों के मुख रोम कूपों से लगे हुए हैं। इन्हीं के द्वारा पसीना बाहर निकलता है और इन्हीं के द्वारा रस भीतर और बाहर डोलता हुआ शरीर को तृप्त करता है। इन्हीं के द्वारा उपटन, तैल, मर्दन, स्नान, चन्दनादि लेपन इत्यादि का सारभूत वीर्य शरीर के भीतर प्रविष्ट होता है त्वचा पक्की होकर स्पर्श सुख दुःख का अनुभव करती है। ये चारों धमनियाँ सम्पूर्ण अङ्ग में व्यापक हैं। जैसे कमल की डंडी स्वाभाविक ही छिद्रों से भरी हुई होती है, उसी तरह धमनियाँ भी स्वाभाविक ही छिद्रों से भरी होती हैं और इन्हीं के द्वारा रस इकट्ठा होता है।

प्रकृति भूत और अप्रकृति भूतों की क्रिया

४१—सुश्रुत संहि० में यह भी लिखा है कि :—

"पञ्चाभिभूतास्त्वथ पञ्चकृत्वः पञ्चेन्द्रियं पञ्च सुभावयंति। पञ्चेन्द्रियपञ्चसुभावयित्वा पंचत्वमायान्ति विनाशकाले ॥"

पंचाभिभूताः, शब्द, स्पर्श, रूप, रस गंध इन पाँचों से व्याप्त

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथिवी इन पाँचों से व्याप्त जो धमनियाँ हैं सो 'पंचेन्द्रियं' जो कर्म पुरुष उसको 'पंचसु' श्रोत्रादि पांच इन्द्रियों में 'पंचकृत्व' पांच विभाग करके योजना करती है वे ही धमनियाँ विनाश काल में सूक्ष्म रूप इन्द्रिय पंचक को योजना करके आकाशादि पंच महाभूतों में मिल जाती है।

स्रोतों के मूलविद्ध का लक्षण।

४२—स्वतन्त्र में प्राणादिवाही स्रोत २२ प्रकार के हैं। 'तत्र प्राणवहेद्वे तयोर्मूलं हृदयंरसवाहिन्यश्चधमन्य:, इनमें से प्राणवाही स्रोत दो हैं। इनके मूल हृदय और रस वाहिनी धमनी है।

"तत्र विद्धस्य कोशनविनमनमोहनभ्रमणयेपनानिमरणं वा भवति।" इन मूलों के विधने जाने से बकबक टेढ़ा होना, मोह, भ्रमण, कम्पन और मरण भी होता है।

४३—इसी प्रकार अन्नवाही दो स्रोत हैं, तिनके मूल आमाशय और अन्नवाही है, उनके विधने से अफर, शूल, अन्न में अरुचि वमन तृष्णा, कम दीखना और मरण भी होता है। उदकवाही दो हैं, इनके मूल दो हैं तालू और पिपासा स्थान इनके विधने से तृष्णा और तत्काल मरण होता है।

रसवाही आदि स्रोत।

४४—रसवाही दो स्रोत हैं-उनके हृदय और रसवाहिनी धमनिया हैं। इनके विधने से शोष और प्राणविद्ध के समान मरण और वैसे ही लक्षण होते हैं। रक्तवाही दो स्रोत हैं, जिन मूल यकृत (प्लीहा) और रक्तवाहिनी धमनियां हैं। इन में वेध होने से देह का कालापन, ज्वर, दाह, पाण्डुता रक्त का अत्यन्त बहना और नेत्रों का लाल होना इत्यादि लक्षण होते हैं। मांस वाही दो स्रोत हैं, उनके मूल स्नायु त्वचा और रक्त वाहिनी धमनियां हैं। इनके विधने से सूजन, मांस शोष, नसों में गांठ और मरण इत्यादि उपद्रव होते हैं। मेदा वाहि दो स्रोत हैं, इनके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूल कमर और अण्डकोष हैं। इनके विधने से पसीनों का आना देह पर चिकनाई, तालु में खुश्की, अत्यन्त सूजन और प्यास आदि उपद्रव होते हैं। मूत्र वाही दो स्रोत हैं, उनके मल वास्ति और मेढ़ हैं। इनके विध जाने से वस्ति फैल जाती है, मूत्र रुक जाता है और मेढ़ में जकड़न होती है अर्थात् स्तब्ध हो जाता है।

पुरीष वाह्यादि स्रोत।

४५—पुरीषवाही दो स्रोत हैं, उनके मूल पक्वाशय और गुदा हैं, इनमें वेध होने से अनाह, दुर्गन्धता और आँतों में गांठ पड़ जाया करती हैं। शुक्रवाही दो स्रोत हैं, इनके मूल स्तन और अण्डकोष हैं। इलमें वेध होने से नपुंसकता, देर में वीर्य का निकलना और वीर्य का लाल हो जाना इत्यादि उपद्रव होते हैं। आर्त्तववाही दो स्त्रोत हैं, इनके मूल गर्भाशय और आर्त्तव-वाही धमनियाँ है। उनमें वेध से होने बाँझ होना मैथुन को न सह सकना और आर्त्त का नाश इत्यादि उपद्रव होते हैं। सैवनी के वेध से अत्यन्त पीड़ा होती है। स्त्रोतों विद्ध असाध्य होते हैं, इनकी चिकित्सा शल्योद्धरण प्रकार से करे, और जिसमें से शल्य निकल आया है उसको चिकित्सा क्षतविधान अर्थात् घाव की रीति से करे।

स्रोत के लक्षण।

४६—हृदय छिद्र से लेकर जो देह के भीतर अभिवहन शील छिद्र हैं, उन्हें स्रोत कहते हैं परन्तु इनमें सिरा और धमनियों को छोड़ देना चाहिये।

४७—ऊपर लिख आये हैं [सं० ३७ में] कि इन चौबीस नाड़ियों में इडा, पिंगला और सुषुम्ना यही तीन नाड़ी सब से श्रेष्ठ और महत्वपूर्ण हैं। इन्हीं के ऊपर स्वरोदय शास्त्र की कुल रचना है। क्योंकि श्वासोच्छ्वास क्रिया इन्हीं तीन नाड़ियों से होती है। और इन्हीं तीनों नाड़ियों को यथावत् पहिचान करके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्हें नियमानुकूल शुद्ध रखने से ही मनुष्य शारीरिक और मानसिक व्याधियों से बचकर योग क्रिया में भी कुशलकारी बन सकता है। कहा है "नीरीक्षतव्यंयत्नेन सदा प्रत्यूष कालतः। कालस्य वंचनार्थाय कर्म कुर्वतियोगिनः [शि० स्व०] प्रातःकाल हमेशा यत्न से स्वर देखें, क्योंकि योगी लोग काल को दूर करने के लिए स्वर कर्म करते हैं।

❁ स्वर की पहिचान ❁

स्वर को पहिचानने के लिये एक नथने को बन्द कर दूसरे से श्वांस छोड़ने पर श्वांस बिना किसी प्रतिरोध के बाहर निकले और अन्दर जावे तो समझना चाहिये, वही स्वर चल रहा है। एक नथने से कम और एक से विशेष चले अथवा दोनों नासिका-पुटों से बराबर श्वांस चले तब दोनों स्वर चल रहे हैं ऐसा समझना चाहिये। प्रतिदिन प्रातः सूर्योदय के समय २॥ घड़ी या एक घण्टे के हिसाब पर एक एक नथने से श्वांस निकलती है। इसी तरह दिन में बार बार बायें और बार बार दाहिने नथने से यथाक्रम श्वांस चलती रहती है।

स्वर चलने का नियम।

आदौचन्द्रः सितेपक्षेभास्करोहिसितेतरे।
प्रतिपत्तोदिनान्याहुस्त्रीणित्रीणिकृतोदयौ॥
सार्धद्विघटिकोज्ञेयः शुक्लेकृष्णेशशीरविः।
वहत्येकदिनेनैवयथाषष्टिघटीःक्रमात्॥

(शि० स्व०)

शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से तीन तीन दिन तक चन्द्रस्वर का उदय होता है। और कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा से तीन तीन दिन तक सूर्यस्वर का उदय होता है। शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा की

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६० घड़ियों में सूर्योदय से लगाकर क्रम से २॥ घड़ी चन्द्रमा और २॥ घड़ी सूर्य स्वरों का उदय होता रहता है।

कृष्ण पक्ष में प्रतिपदा के दिन सूर्योद्रय से लगाकर क्रम से २॥ घड़ी सूर्य और २॥ घड़ी चन्द्रमा का उदय दिन भर होता रहता है। इसका तात्पर्य यह है कि शुक्ल पक्ष में प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, सप्तमी, नवमी, त्रयोदशी, चतुर्दशी और पौर्णिमा इन नौ तिथियों में प्रातः सूर्योदय के समय पहले बाएँ नासिका पुट से श्वांस पिंगला नाड़ी [चन्द्रस्वर] चलती है। चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी, दशमी, एकादशी और द्वादशी इन ६ तिथियों में पहले दाहिने नथने से श्वांस सूर्य अथवा इडा नाड़ी चलती है। इस प्रकार श्वांस १ नथने से २॥ घड़ी अर्थात् एक घण्टे तक चलती है। फिर दूसरे नथने से चलती है।

कृष्णपक्ष की १, २, ३, ७, ८, ९, १३, १४ और ३० इतनी तिथियों में प्रातः सूर्योदय के समय पहिले दाहिने नथने से श्वांस सूर्य्य इडा नाड़ी चलती है। और ४, ५, ६, १०, ११, १२, इन छह तिथियों में सूर्योदय के समय पहले बाएँ नथने से श्वांस चन्द्र स्वर पिंगला नाड़ी चलती है। इसका समय २॥ घड़ी यानी एक घन्टा तक रहता है। बाद में दूसरा स्वर एक घन्टा तक चलता है। इस प्रकार २४ घन्टे में एक-एक घन्टा एक-एक स्वर का उदय होता रहता है।

मनुष्य की जीवनी में श्वांस चलने का नैसर्गिक नियम यही है। इस प्रकार नाक के नथनों द्वारा श्वांस प्रश्वास क्रिया के होने से स्वरों का उदय होता रहता है। यह प्राकृतिक नियम है।

द्रष्टव्यः—जो पुरुष मुख द्वारा श्वास प्रश्वास करते हैं उनकी आयु अल्प हो जाती है। मुख द्वारा श्वास प्रश्वास क्रिया करना स्वभाविक नियम नहीं है स्वरों का उदय देखते समय मुख से श्वास प्रश्वास क्रिया करने का अभ्यास त्याग देना चाहिये। स्मरण रहे कि जब तक मुख न बंद करोगे तब तक स्वरों की

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहचान अच्छी तरह से नहीं हो सकेगी। इस विद्या के सीखने में प्रथम तत्वों को पहचानना चाहिये।

पाँच तत्त्वों का उदय

वहेयुस्तद्घटीमध्येपंचतत्वानिनिर्दिशेत् ।
प्रतिपत्तोदिनान्याहुर्विपरीतेविवर्जयेत् ॥
(शि० स्व० ६४)

अहर्निश (दिन रात) में ६० घड़ी अथवा १ घन्टे के बीच में अढ़ाई घड़ी अथवा १ घन्टे के हिसाब से एक-एक नथने से बंधी सिलसिलेवार श्वांस (स्वर अथवा नाड़ी) चलते समय एक एक करके पंचतत्वों का उदय रहता है। अर्थात् आधी घड़ी में एक तत्व का उदय होता है। अर्थात् १२ मिनट में पहले वायु तत्व, दूसरा अग्नि तत्व, तीसरा पृथिवी तत्व, चौथा जल तत्व, पांचवा आकाश तत्व चलता है। एक स्वर में इस क्रम से पांच तत्व प्रकाशित होते हैं। स्वर विद्या के सीखने में प्रथम तत्वों को पहचानना चाहिये। तत्वों के पहचानने और स्वर के नियमों का बतलाने वाला लेख अब आगे लिखा जाता है।

पंचाकृत स्थूलशरीर निर्णय

शरीर बहुधा तीन प्रकार का माना गया है स्थूल, सूक्ष्म और कारण परन्तु यहाँ पर केवल स्थूल शरीर जो पंचीकृत पंच महाभूत के २५ तत्वों से बना है उसी का निर्णय बतलाया जाता है।
१ आकाश, २ वायु, ३ अग्नि, (तेज) ४ जल, ५ पृथिवी।

(१) आकाश के पाँच तत्व—१ शोक २ काम ३ क्रोध ४ मोह ५ भय।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) वायु के पाँच तत्व—१ प्रसरन २ धावन, ३ वलन ४ चलन ५ आकुंचन (सिकुड़ना)

(३) अग्नि के पाँच तत्व—१ निद्रा २ तृषा ३ क्षुधा ४ कान्ति ५ आलस्य ।

(४) जल के पाँच तत्व—१ राल २ स्वेद ३ मूत्र ४ शुक्र ५ रक्त ।

(५) पृथिवी के पाँच तत्व—१ रोम २ त्वचा ३ नाड़ी ४ मांस ५ अस्थि ।

पँचीकरण का स्पष्टीकरण चित्र

अंक	स्थलभूत	आकाश	वायु	तेज	जल	पृथिवी
१	आकाश	१/२	१/८	१/८	१/८	१/८
२	वायु	१/८	१/२	१/८	१/८	१/८
३	तेज (अग्नि)	१/८	१/८	१/२	१/८	१/८
४	जल	१/८	१/८	१/८	१/२	१/८
५	पृथिवी	१/८	१/८	१/८	१/८	१/२

(दोहा)

एक तत्व तैं पाँच कर, पाँचन तैं पच्चीस ।
पाँच अंश न्यारे रहे, मिश्रित कीने बीस ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीरेन्द्र गुप्त लिखित

"इच्छासानुसार सन्तानोत्पत्ति"

मूल्य २॥)

इस अनमोल ग्रन्थ ने सन्तानोत्पत्ति के विषय में
भाग्य की सत्ता को
अर्थहीन सिद्ध कर दिया है !

पाठक इच्छानुसार

लड़का चाहें तो !

लड़की चाहें तो !!

और

यदि देश की जनसंख्या वृद्धि को रोकने के सदुद्देश्य से
सन्तान ही न चाहें तो भी !!!
इस ग्रन्थ के अध्ययन से वांछित मार्गदर्शन
प्राप्त कर सकते हैं ।

प्राप्ति स्थान :—

वीरेन्द्रनाथ अश्विनीकुमार,
प्रकाशन मन्दिर, बाजार चौक,
मुरादाबाद (उ. प्र.)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

❀ तत्त्वसिद्धासन की विधि ❀

(१) मेरुदण्ड (पृष्ठ भाग की हड्डी) को सीधा रख कर छाती ऊँची और कन्धा पीछा करना ।

(२) वाम पैर की एड़ी और अण्डकोष (योनिस्थल) के बीच भाग में दृढ़ बैठाकर दक्षिण पैर की एड़ी मुत्रेन्द्रिय के उपरि भाग में दृढ़ बैठानी और टोडी (चुबुक) हृदय (हँसली) के ऊपर अड़ाकर दृढ़ रखना ।

(३) मेरु दण्ड को हिलने से (वा अपने गिरने से) बचाव के लिए दोनों हाथ फैला कर दृढ़ता के साथ दोनों जानुवों में लगाना फिर अनन्तर त्राटक की सहायता से अपनी एड़ी देखना ।

दीर्घकाल पर्यन्त इस विधि से सिद्धासन अर्थात् तत्व-सिद्ध-आसन में उपवेशन करने से शरीर में कभी किसी प्रकार के दुःख की संभावना नहीं होती है । वरन् अस्वस्थ शरीर दिन पर दिन स्वस्थ होता जाता है ।

स्वर-साधन-विधि ।

स्वर क्या है ?

स्वर साधक प्रेमियों को स्वर साधन की विधि बतलाने से पूर्व स्वर किसे कहते हैं उसे प्रथम मालूम करा देना आवश्यक है ! नासारन्ध्र द्वारा श्वास वायु के गमनागमन समय जो अव्यक्त मधुर शब्द होता है उसको स्वर कहते हैं। स्वर प्रधानतः दो प्रकार के होते हैं । एक को सूर्य स्वर और अन्य को चन्द्रस्वर कहते हैं । दाहिनी नासा से सूर्यस्वर और बाँयीं नासा से चन्द्रस्वर का उच्चारण होता है । सूर्यस्वर के समय शरीर में दिवा और चन्द्र-स्वर के समय शरीर में रात्रि होती है । इन दिन रात्रि में अर्थात् एक सूर्योदय से अन्य सूर्योदय पर्यन्त मनुष्य शरीर में २१६००

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इक्कीस हज़ार छः सौ बार श्वास वायु का गमनागमन स्वाभाविक होता रहता है। अर्थात् १ घण्टा में ९०० व १ मिनट में १५ बार जानो। इसी हिसाब से जीवों की आयु का परिमाण होता है। इसलिए अपनी आयु को बढ़ाना वा घटाना अपने ही आधीन है। साधारणत: सकल मनुष्य की आयु के अढ़ाई दिन एक दिन रात्रि में व्यतीत होते हैं। कारण प्रत्येक दिन रात्रि में प्राय: पाँच बार स्वर का परिवर्तन होता है। दुर्बल और व्याधित पुरुषों में स्वर परिवर्तन की संख्या और भी अधिक है। तथा अनेक बार भोजन करने से भी स्वर परिवर्तन अनेक बार होते हैं। इस विषय पर ध्यान न देकर कार्य करने से अपने भाग्य मान कर दु:साध्यरोग और अकालमृत्यु के गोद में बैठना पड़ता है। स्वरों के अव्यवस्था के कारण दु:साध्यरोग वा अकाल मृत्यु ही नहीं वरन् और अनेक प्रकार के दु:खमय परिणाम होते हैं। सन्तान का न होना, दुष्ट एवं बुद्धि हीन सन्तान का होना, काम करके विफल मनोरथ होना और संशय में रहना स्वर ज्ञान के अभाव से होता है। सामान्य रूप से स्वर की व्यवस्था की जाय तो संसार में अनेक लाभ उठाये जा सकते हैं।

स्वरों के कार्य।

स्वरों के कार्य प्रधानत: दो प्रकार के होते हैं। जिनमें से एक को सृष्टि कार्य और अन्य को लयकार्य कहते हैं। चन्द्रस्वर के समय शरीर में सृष्टि का कार्य और सूर्य स्वर के समय शरीर में लयकार्य होता है। अर्थात् जिस समय सूर्य स्वर वर्तमान रहता है उस समय भुक्त अन्न का पाचन और जिस समय चन्द्र-स्वर वर्तमान होता है उस समय भुक्त अन्न के सारांश से शरीर का संगठन होता है। शारीरिक सृष्टि और लय कार्य सम्पूर्ण रूप से सांसारिक सृष्टि और लय कार्य के अनुरूप हैं। इसलिए जिस प्रकार उदय के पश्चात् सूर्यनारायण के वर्तमान काल में सांसारिक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकल पदार्थ यथा सम्भव स्वरूपान्तर को प्राप्त होते जाते हैं अर्थात् सकल पदार्थ पार्थिव एवं जलीय आदि अवस्था से सूक्ष्म रूप से जलीय एवं आग्नेय आदि अवस्था में होवे जाते हैं उसी प्रकार सूर्य स्वर के वर्तमान काल में भुक्त अन्न में अवस्थित सकल पदार्थ पार्थिव एवं जलीय आदि अवस्था से जलीय एवं आग्नेय आदि अवस्था में होवे जाते हैं। अन्यथा भुक्त अन्न से शरीर गठन असम्भव होता है। पश्चात् जिस प्रकार रात्रिकाल में सांसारिक सकल पदार्थ आकाशिक एवं वायवीय आदि अवस्था से सूक्ष्म-रूप से, यथासम्भव वायवीय एवं आग्नेय अवस्था में होते जाते हैं उसी प्रकार चन्द्रस्वर के वर्तमान काल में भुक्त अन्न के सारांश में अवस्थित सकल पदार्थ आकाशिक एवं वायवीय आदि अवस्था से, सूक्ष्म रूप से, वायवीय एवं आग्नेय आदि अवस्था में होते जाते हैं। अन्यथा शरीर की दृढ़ता और बल की अधिकता नहीं होती है।

भुक्त अन्न में और भुक्त अन्न के सारांश में अवस्थित सकल पदार्थ को पार्थिव एवं जलीय आदि अवस्था से जलीय एवं आग्नेय आदि अवस्था में अथवा आकाशिक एवं वायवीय आदि अवस्था से वायवीय एवं आग्नेय आदि अवस्था में परिवर्तन करने में जो पृथक-पृथक समय की आवश्यकता होती है उन सब समय को क्रम से पृथिव्यादि वा आकाशादि तत्वों के समय कहते हैं। अर्थात् सूर्य स्वर के वर्तमान काल में पृथिवी जल, अग्नि, वायु एवं आकाश तत्व और चन्द्रस्वर के वर्तमान में आकाश, वायु, अग्नि, जल एवं पृथिवी तत्व क्रम से उदय होवे जावे हैं और क्रम से लय हो जावे हैं। परन्तु ध्यान रखना चाहिये कि एक तत्व उदय होकर लय होने के पश्चात् ही अन्य तत्व का उदय होता है। तत्वों के वे सब समय स्थूल तत्व—काल कहे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाते हैं। इनमें से प्रत्येक में सूक्ष्म तत्व-काल भी हैं। परन्तु प्रथमतः स्थूल तत्वों के उदय, अस्त और वर्तमानकाल जानने की आवश्यकता होती है, और इसलिए दोनों स्वर नियमित किये जाते हैं।

स्वर को नियमित करने की विधि।

स्वर को नियमित करने की विधि अनेक प्रकार की होती हैं। उनमें से प्राणायाम साधन के उपयोगी विधि कुछ विशेष हैं। उस विधि के अनुसार सूर्य स्वर के उदय के पश्चात् सूर्य स्वर को बारह घण्टा पर्यन्त वर्तमान रखना चाहिए, पश्चात् चन्द्रस्वर को उदय होने देवें और चन्द्रस्वर को बारह घण्टा पर्यन्त वर्तमान रक्खें। इसका सारांश यह है कि प्रत्येक स्वर को प्रतिदिन बारह बारह घण्टा वर्तमान रखने के यत्न का नाम स्वर साधन कहलता है।

स्वरसाधकों के लिये उपयुक्त नियम

पान भोजन के साथ स्वर का विशेष सम्बन्ध रहने के कारण जो साधक स्वर साधन करना चाहें उन्हें साधन के समय पान भोजन को नियमित करने के लिये निम्न नियमों पर विशेष ध्यान देना आवश्यकीय होगा।

(१) सम्पूर्ण दिन रात्रि में अर्थात् २४ घन्टे में एक ही बार भोजन करना।

(२) प्रत्यह एक ही प्रकार के पदार्थ एक ही परिणाम में भोजन करना अर्थात् रोटी दाल खाने का हिसाब रखा जाय तो प्रत्यह रोटी दाल ही खाना चाहिये। इसी प्रकार दाल भात खाने का हिसाब रखा जाय तो प्रत्यह दाल भात ही खाना चाहिये। ध्यान रखना चाहिये कि स्वर के साधनकाल में नित्य प्रति खाना बदलना प्रशस्थ नहीं है।

(३) चन्द्रस्वर के वर्तमान काल में कभी भी भोजन नहीं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना। ध्यान रखना चाहिये भोजन के निमित्त चन्द्रस्वर को निरोध करके सूर्यस्वर को वर्तमान करना भी प्रशस्त नहीं हैं।

(४) जिस समय स्वभाव से सूर्य स्वर का उदय होता है उस समय दो घन्टा के अन्दर भोजन करना।

(५) भोजन के पश्चात् दो घन्टा के अन्दर प्रयोजन अनुरूप दूध व जल आदि तरल पदार्थ का सेवन करना।

(६) विरोधी रसों को सेवन नहीं करना चाहिये। निमक मिरचो, खटाई में मेल है, मीठा के साथ खटाई का मेल है। कडुवा के साथ निमक का मेल है। खटमिट्ठे के साथ निमक का मेल है। निमक के साथ मीठा का, दूध के साथ निमक का, कडुवा के साथ मीठा का, मिरची के साथ मीठा का, दूध के साथ दही का विरोध है।

उपरोक्त नियम पालन के बिना स्वर साधन करना अत्यन्त कठिन है। तीन महीना पर्यन्त नियम पालन के पश्चात् भी स्वर नियमित न होवे तो अन्यान्य उपाय करना प्रशस्त है।

अन्यान्य उपाय

जिस समय सूर्यस्वर वर्तमान करने की आवश्यकता होती है, उस समय बायें करवट में लेटकर सिर ऊँचा करके बायीं हथेली पर १०। १५ मिनट रखा जाता है। इसी प्रकार जिस समय चन्द्रस्वर वर्तमान करने की आवश्यकता होती है, उस समय दाहिने करवट में लेटकर सिर ऊँचा करके दाहिनी हथेली पर १०। १५ मिनट रखा जाता है। अन्यून तीन महीना नियम डालने के पश्चात् कदाचित् कोई स्वर असमय बदलता जाये तो सूर्यस्वर के लिये घी सेवन और चन्द्र स्वर के लिये जल या शर्वत का सेवन प्रशस्त है। ३ महीना साधन करने से स्वर साधन होता है। परन्तु ६ मास के साधन द्वारा स्वर सम्पूर्ण रूप से नियमित होता है।

चन्द्रस्वर के समय भोजन और सूर्यस्वर के समय शयन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना निषिद्ध है। इसलिये विचारवान साधक दिन में सूर्य स्वर और रात्रि में चन्द्र स्वर रखता है। परन्तु दिन में चन्द्रस्वर और रात्रि में सूर्यस्वर रखना होय तो दिन में शयन और रात्रि में भोजन करना प्रशस्थ है। जिस समय सूर्य स्वर का अस्त और चन्द्र स्वर का उदय होता है उस समय को सन्ध्याकाल कहते हैं। सन्ध्याकाल में योग साधन करना प्रशस्त है, इसलिये दिन में सूर्य स्वर रखने वालों को चाहिये कि सायंकाल भजन साधन करें, परन्तु दिन में चन्द्रस्वर रखने वालों को चाहिये कि प्रातःकाल में भजन साधन करें।

स्वर साधन को नाड़ी शुद्धि भी कहते हैं। नाड़ी शुद्धि के पश्चात् भूत शुद्धि की जाती है भूत वा महाभूत शब्द से तत्व भी कहा जाता है।

तत्व क्या है ?

तत्व साधक प्रेमियों को तत्वसाधन की विधि बतलाने से पूर्वतत्व किसे कहते हैं प्रथम इसको बतला देना आवश्यक है पृथिवी. जल, अग्नि, वायु एवं आकाश इन पांच महाभूतों को पाचतत्व कहते हैं। तत्व शब्द का अर्थ–विस्तार करना। "तनोऽतीति तत्वं—तनु विस्तारे (जो तानतून के विस्तार में आवे) उसे तत्व कहना प्रयुक्त है। विज्ञान हमें बतलाता है कि जो वस्तु विस्तार को प्राप्त होती है अन्त में पुनः अपने पूर्व स्थिति में उसे आजाना पड़ता है। उसी क्रिया का नाम उदय और लय प्रसिद्ध है। अतः जिस प्रकार संसार में तत्व जो पाँच है क्रम से [यथा ब्रह्माण्डे तथा पिण्डे] भी वे पाँच तत्व क्रम से उदय और क्रम से लय होते हैं। तत्वों के उदय और लय होने के कारण जिस प्रकार संसार में सूर्य्य और चन्द्र विद्यमान हैं, उसी प्रकार शरीर में सूर्य्य स्वर और चन्द्र स्वर विद्यमान हैं। इन्हीं दो स्वरों के द्वारा जिन-जिन तत्वों का उदय और लय जिस प्रकार होना है अब आगे वर्णन करना हमारे लेख का विषय होगा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्वों का उदय और लय।

सूर्य्यस्वर के वर्तमान काल में पृथिवी, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश तत्व और चन्द्र स्वर के वर्तमान काल में आकाश, वायु: अग्नि, जल एवं पृथिवीतत्व क्रम से उदय होते जाते हैं। और क्रम से लय होते हैं। सूर्य्य स्वर के उदय के साथ पृथिवी तत्व का उदय होता है। इसके लय के पश्चात् जल तत्व का उदय और लय होता है। सूर्य्य स्वर के अस्त के समय आकाश तत्व का अस्त होता है। इन तत्वों को सूर्य स्वर के तत्व कहते हैं। इसी प्रकार चन्द्रस्वर के उदय के समय आकाश तत्व का उदय होता है। उसके अस्त के पश्चात् वायु तत्व के उदय और लय होते हैं। इसी क्रम से अग्नि, जल, एवं पृथिवी तत्व के उदय और अस्त होते हैं। चन्द्रस्वर के अस्त के साथ ही पृथिवी तत्व का अस्त होता है। इन तत्वों को चन्द्र स्वर के तत्व कहते हैं। चन्द्रस्वर के पृथिवी तत्व के पश्चात् सूर्यस्वर के पृथिवी तत्व का उदय होता है। इसी प्रकार सूर्यस्वर के आकाश तत्व के पश्चात् चन्द्रस र के आकाश तत्व का उदय होता है। वे दोनों सन्धि समय नाम से कहे जाते हैं इनमें से आकाश तत्व के सन्धि समय को सन्ध्या समय कहते हैं।

शारीरिक तत्त्व स्थान।

जिस प्रकार संसार में पृथिवी, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश स्वरूप मर्यादा के अनुसार अधोर्द्ध अवस्थित होते हैं, इसी प्रकार शरीर में पृथिवी आदि तत्वों के केन्द्र स्थान स्व स्वमर्यादा प्रमाण अधोर्द्ध अवस्थित हैं। अर्थात् पृथिवी तत्व का केन्द्र स्थान मेरुरज्जु के निम्नतम भाग में हैं, उसके उपरि भाग में जल तत्व का केन्द्र स्थान है, उसके उपरि भाग में अग्नि तत्व का केन्द्र स्थान है। वे तीन केन्द्र स्थान परस्पर अत्यन्त निकटवर्ती हैं। इनके उपरि भाग में वायु तत्व का केन्द्र स्थान एवं सर्वोपरि आकाश तत्व

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का केन्द्र स्थान है। प्रत्येक केन्द्र स्थान से मेरुरज्जु की अनेकानेक शाखा निकली हैं। मेरुदण्ड के दोनों पार्श्व में अनेकानेक छिद्र हैं उन छिद्रों की सहायता से वे सब शाखा मेरुदण्ड के वाह्य प्रदेश में आई हुई हैं और अत्यन्त सूक्ष्म अगणित शाखा प्रशाखा में विभक्त होती हुई शरीर के सर्व स्थान में फैली हुई होती हैं। इन शाखा प्रशाखाओं की सहायता से पृथिव्यादि तत्वस्वस्थ केन्द्र स्थान से शरीर के सकल अङ्ग प्रत्यङ्ग में प्रवाहित होते रहते हैं। इसलिये जो तत्व जिस अंग में वा अंग के जिस अंश में प्रवाहित होता है उस अंग को व उस साखांश को उस तत्व का स्थान कहते हैं। तत्व सिद्ध आसन के समय अंग विन्यासन के लिये इन तत्व स्थानों को स्वस्व मर्यादा प्रमाण रखने की आवश्यकता होती है। तत्वसिद्धअंग-बिन्यासन के लिये सब आसनों में सिद्धासन का लगाना सर्वोत्तम है।

तत्व के अनुसार श्वासवायु की गति।

सूर्य स्वर के पृथिवी तत्व के उदय काल में श्वास वायु की गति अन्य समय की गति से अधिक होती है। परन्तु चन्द्र स्वर के आकाश तत्व के उदय काल में श्वास वायु की गति से कम होती है। सूर्यस्वर के वर्त्तमान काल में श्वास वायु की गति घटती जाती है परन्तु चन्द्रस्वर के वर्तमान काल में वह गति बढ़ती जाती है। सूर्यस्वर के आकाश तत्व के अस्त समय में २।३ बार श्वास-वायु की गति नहीं होती है। अंगुल प्रमाण श्वास वायु की गति से तत्वों का ज्ञान निम्नप्रकार देखिये। यथा—

(१) पृथिवी तत्व का स्वर १६ अंगुल प्रमाण, मीठी वस्तु की चाह
(२) जल तत्व का स्वर १२ " " , सलोनी वस्तु की "
(३) अग्नि तत्व का स्वर ८ " " , तिक्त वस्तु की "
(४) वायु तत्व का स्वर ४ " " , खट्टी वस्तु की "
(५) आकाश तत्व का स्वर ० " " , बुरे स्वाद की "

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्रष्टव्य—बीच में पृथिवी, नीचे जल, ऊपर अग्नि, वायु तिरछे चलती है। दोनों स्वर मिले हुए चलते हों तो आकाश स्वर जानना। स्पष्ट उदाहरण—जिस समय १६ अंगुल स्वर नासिका से निकले और मीठी वस्तु की चाहना हो तो पृथिवी तत्व वर्तमान है, ऐसे ही और तत्वों को जानना।

स्थान पर से तत्वज्ञान।

पैरों से लेकर जानु (गुठने) पर्यन्त पृथिवी का स्थान है, जानु से लेकर गुदा पर्यन्त जल तत्व का स्थान है, गुदा से लेकर हृदय पर्यन्त अग्नितत्व का स्थान है, हृदय से लेकर भ्रू पर्यन्त वायु तत्व का स्थान है और भ्रू से लेकर ब्रह्मरन्ध्र पर्यन्त आकाश तत्व का स्थान है। किन्ही योगवित् लोगों का निम्न प्रकार भी मत है। यथा :—

(१) दोनों कन्धों के ऊपर—अग्नि स्थित है।
(२) नाभि के जड़ में—वायु "
(३) जानुओं की जगह में—पृथिवी "
(४) पैरों के अन्त में———जल "
(५) मस्तक में————आकाश "

पांच तत्वों के रंग, रूप, गुण।

तत्व	रंग	रूप	गुण
(१) पृथिवी	पीत वर्ण	चतुष्कोण	गंध
(२) जल	शुभ्र वर्ण	अर्द्ध चन्द्राकार	रस
(३) अग्नि	रक्त वर्ण	त्रिकोण	रूप
(४) वायु	हरित वर्ण	गोल	स्पर्श

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(५) आकाश ० निराकार शब्द

षण्मुखी मुद्रा द्वारा तत्वों के रंग रूप देखने की विधि :—(१)

दोनों कानों में दोनों अंगुठे लगावे और दोनों नासापुट में दो बीच की अंगुली लगावे, ओठों के बीच में अनामिका और कनिष्ठा को लगाये, अन्य दो तर्जनी अंगुलियों को आँखों में लगावे इसको योगी षण्मुखीमुद्रा कहते हैं। ऐसा करके अपने भ्रूमध्य में ध्यानावस्थित होकर देखने से पृथिवी आदि तत्वों के रंग अथवा रूप का ज्ञान होता है।

दर्पण (शीशा) द्वारा तत्वों के रूप देखने की विधि :—(२)

शीशा (दर्पण) में मुख देखकर तहाँ श्वाँस निकाले वहाँ जैसा रुप दिखाई पड़े उस ही से विचक्षण मनुष्य-पृथिव्यादि तत्वों को जानें। चतुष्कोण, अर्धचन्द्र, त्रिकोण, गोलाकार विन्दु इन आकारों से यथाक्रम पृथिवी, जल, अग्नि, वायु का रूप दिखाई पड़ेगा। आकाश का कुछ नहीं।

आसन द्वारा तत्वों के रंगरूप देखने की विधि :—(३)

मनुष्य को चाहिये कि जब एक प्रहर रात्रि शेष रहे तब सिंह आसन की भाँति (दोनों पगों को पृथिवी पर जमा के पावों को चूतड़ों के तले रखे और सीधा बैठके दोनों हाथों को उलट के पैरों पर रखे, इस प्रकार से कि अंगुलियों के सिर पेट की तरफ रहें) फिर दोनों नाक के नेत्रों के सिरे भृकुटी पर दृष्टि बाँध के आते जाते तत्वों को देखे तो मुहूर्त तक ऐसे करते करते एक मास में ज्यों का त्यों तत्व दीखने लगेगा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्वसाधन द्वारा भूतजय की प्राप्ति ।

जिस समय जिस तत्व का उदय होता है, उस तत्व के श्वास वायु की जो गति होती है उस गति के तद्वत् उसके परिवर्ति (दूसरे) श्वास वायु की गति की जाय और उस प्रकार से अन्यून्य २१३० दो हजार एक सौ साठ श्वास वायु की गति एक ही प्रकार की जाय तो उस तत्व का साधन होता है ।

पूर्व लिख आये हैं कि तत्व का नाम भूत संज्ञा है । तत्व पाँच हैं अतः पाँचो तत्वों को पञ्च महाभूत नाम से भी कहा जाता है योगदर्शन शास्त्र के विभूति पाद में महर्षि पतञ्जलि जी ने भूतजय के विषय में निम्न सूत्र दर्शाया है-

स्थूल स्वरूप सूक्ष्मान्वयार्थवत्वसंयमात् भूतजयः ॥

योग द० वि० पा० स० ४३

अर्थात् पंचमहाभूतों के स्थूल, स्वरूप सूक्ष्म, अन्वय, अर्थवत्व इन पाँच रूपों में संयम करने से भूतों का जय होता है । इसके अगले सूत्र में उक्त महर्षि ने भूतजय का फल अणिमादि आठ सिद्धियों की प्राप्ति और शरीर ऐश्वर्य तथा भूत धर्मों के अनभिघात की प्राप्ति होती है । अर्थात् जिस योगी को पृथिवी आदि भूतों का वशीकार होगया है उसको इनसे यथापयोग कार्य लेने के समय कठिनतादि धर्मों का प्रतिबन्ध नहीं होता और इनका प्रतिबन्ध न होने से निर्विघ्नता पूर्वक प्रवृत्त हुआ योगी सब कार्यों को सहज में ही सिद्ध कर लेता है । योग दर्शन शास्त्र प्रतिपादित समस्त विभूतियों की विधि 'सच्ची विभूति' नाम की पुस्तक जो योगमण्डल काशी द्वारा प्रकाशित की गई है देखना चाहिए ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्वसाधन के नियम ।

तत्वसाधन दो प्रकार के होते हैं। जिनमें से एक को सूर्य स्वर के तत्व साधन और दूसरे को चन्द्रस्वर के तत्व साधन कहते हैं। सूर्य स्वर के पाँच तत्व के पृथक-पृथक पाँच साधन होते हैं, उसी प्रकार चन्द्र स्वर के पाँच तत्व के पृथक्-पृथक् पाँच साधन होते हैं। तत्वों के साधनार्थ निम्न नियमों का पालन करना प्रत्येक साधक का परम कर्तव्य समझना चाहिये।

(१) तत्व साधन कोई भी करना होय, उससे उदय काल में साधन प्रारम्भ करना चाहिए।

(२) सबसे प्रथम चन्द्रस्वर के तत्वों के साधन, तत्पश्चात् सूर्यस्वर के तत्वों के साधन करना उचित है।

(३) पृथिव्यादि क्रम से एक एक तत्व साधन सिद्ध करना चाहिए।

(४) एक दिन में दो तत्व वा दोनों स्वर के एक ही तत्व साधन करना उचित नहीं है।

(५) जो तत्व साधन करना है, उसके वर्तमान काल में श्वासवायु की वाह्यगति जितनी दूर पर्यन्त होती है उतनी दूर में उस तत्व का एक यन्त्र रखना चाहिये और उस पर त्राटक करना प्रशस्त है।

(६) त्राटक के समय श्वास वायु की गति की मर्यादा लिखना चाहिये, अर्थात् उस समय एक तत्व के श्वासवायु की गति से अन्य तत्व के श्वास वायु की गति का जो पार्थक्य होता है सो उसे अच्छी तरह जान लेना चाहिये।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* स्पष्टीकरण चित्र *

नाम तत्व वा स्थूल भूत	तन्मात्रा वा विषय व सूक्ष्म भूत वा गुण	ज्ञानेन्द्रिय	कर्मेन्द्रिय	किसके सहारे काम करता है
आकाश	शब्द वा आवाज़	शब्द ज्ञान वाला कान	शब्द करने वाली वाणी	वायु
वायु	स्पर्श (छूना)	स्पर्श ज्ञान वाली त्वचा	स्पर्श करने वाला हाथ	वायु
अग्नि	रूप, रंग	रूप ज्ञान वाली आँख	रूप ज्ञान में सहायक पाँव	सूर्य, चन्द्रमा अग्नि, दीपक आदि
जल	रस	रस ज्ञान वाली रसना	रस त्याग ने वाला लिंग	जल
पृथिवी	गंध	गंध ज्ञान वाली नाक	गंध त्याग ने वाली गुदा	पृथिवी

इसके आगे पृथिव्यादि तत्व साधन की विस्तृत विधि किसी स्वतन्त्र पुस्तक में पृथक् लिखकर बतलाऊँगा यहाँ पर केवल तत्व साधन और स्वर साधन द्वारा साधक को जो-जो फल की प्राप्ति होती है उसी का वर्णन करता हूँ।

तत्व साधन और स्वर साधन का फल

सविधि तत्व और स्वर साधन करने से साधक दूरवर्ति शब्द का श्रवण, दूर स्थित स्पर्श का स्पर्शन, दूर स्थित रूप का दर्शन, दूर स्थित रस का आस्वादन एवं एवं दूरवर्ति गन्ध का

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आघ्राण करने में समर्थवान होता है। इसी को प्रकाश कहते हैं। अब इसके आगे साधारण प्रयत्न से जो जो लाभ स्वर साधन से हो सकते हैं उसके विषय में वर्णन करूँगा।

स्वर के नियमों को पूर्णता से दर्शाने वाला कोष्टक।

भुक्लपक्ष। (सं० २) कृष्णपक्ष।

तिथि	प्रान्त स्वरोदय	तिथि	प्रातःस्वरोदय
१	चन्द्रस्वर-पिंगला नाड़ी	१	सूर्यस्वर-इडा नाड़ी
२	,, — ,,	२	,, — ,,
३	,, — ,,	३	,, — ,,
४	सूर्यस्वर-इडा नाड़ी	४	चन्द्रस्वर-पिंगला नाड़ीं
५	,, — ,,	५	,, — ,,
६	,, — ,,	६	,, — ,,
७	चन्द्रस्वर-पिंगला नाड़ी	७	सूर्यस्वर- इडा नाड़ी
८	,, — ,,	८	,, — ,,
९	,, — ,,	९	,, — ,,
१०	सूर्यस्वर-इडा नाड़ी	१०	चन्द्रस्वर-पिंगला नाड़ी
११	,, — ,,	११	,, — ,,
१२	,, — ,,	१२	,, — ,,
१३	चन्द्रस्वर-पिंगला नाड़ी	१३	सूर्यस्वर-इडा नाड़ी
१४	,, — ,,	१४	,, — ,,
१५	,, — ,,	३०	,, — ,,

इस उपरिकोष्टक से सहज में मालूम हो सकता है, कि किस तिथि को कौन से स्वर का सूर्योदय के समय उदय होगा।

अब दिन मान का भी कोष्टक होना चाहिये, जिससे कितने बजे किस स्वर का उदय होगा यह मालूम हो। अब इसके बाद

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिन मान का कोष्टक दिया जावेगा। पाठकों को घड़ी या पंचांग द्वारा देख लेना चाहिये कि किस ऋतु में कितने बजे सूर्योदय हुआ।

❀ कोष्टक सं० २ ❀

चन्द्रस्वर (पिंगला नाड़ी)	सूर्यस्वर (इडा नाड़ी)
सूर्योदय से समय घंटा	सूर्योदय से समय घंटा
दिन।	दिन।
६ बजे से ७ बजे तक	७ बजे से ८ बजे तक
८ " ९ "	९ " १० "
१० " ११ "	११ " १२ "
१२ " १ "	१ " २ "
२ " ३ "	३ " ४ "
४ " ५ "	५ " ६ "
रात्रि।	रात्रि।
६ " ७ "	७ " ८ "
८ " ९ "	९ " १० "
१० " ११ "	११ " १२ "
१२ " १ "	१ " २ "
२ " ३ "	३ " ४ "
४ " ५ "	५ " ६ "

यह क्रम पहले कोष्टक में जो तीन तिथि एकत्र दी हैं, उन दिनों तक रहता है। फिर तीसरी तिथि के अंत में चौथे दिन सूर्योदय के समय यह क्रम बदल जाता है। इसलिये जिन तिथियों में सूर्योदय के समय पहले सूर्यस्वर का उदय लिखा हो तो नं० २ के कोष्टक में जहाँ पर चन्द्र स्वर लिखा है वहाँ पर सूर्यस्वर समझना

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिये और जहाँ पर सूर्यस्वर है वहाँ पर चन्द्रस्वर समझना चाहिये। इस प्रकार श्वास प्रश्वास की चाल समझ कर काम करने से शरीर स्वास्थ्य अच्छा रहता है, आयु बढ़ती है और अन्त में संसार के समस्त कार्यों में सफलता प्राप्त होती है। आराम से जीवन व्यतीत होता है।

वाम नासिका का श्वास फल।

५५—जब पिंगला नाड़ी (चन्द्र स्वर) चल रहा हो उस समय जितने शुभ और स्थायी काम हैं, उनको करे। और आश्रम, गृहबनाना, दूर गमन, भला काम, योगाभ्यास, चिकित्सादि करे।

दक्षिण नासिका का श्वास फल।

५६—जब इडा (सूर्य) नाड़ी चलती हो तब अन्य कामों को जैसे युद्ध, व्यायाम, पदार्थों का भोग, निद्रा, औषधि ग्रहण, खरीद बिक्री, भोजन, स्नान, आकर्षण, दान, अभ्यास क्रीड़ा, आदि अर्थात् संपूर्ण क्रूर कर्म और अनेक प्रकार के चर (शीघ्र समय के) कामों को करे।

सुषुम्ना श्वास फल।

५७—अब सुषुम्ना फल कहते हैं। जो क्षण में बायाँ और क्षण में दाहिना चले अथवा दोनों स्वर एक ही समय में चले वह सुषुम्ना स्वर है इस स्वर में कोई भी भला बुरा काम न करे, केवल आत्म चिंतवन करते रहना चाहिये। योगाभ्यास से ध्यान करे, किन्तु वह भी परमात्मा का करे। शुभ अशुभ की इच्छा न करे।

तात्पर्य—स्थिर और शुभ कार्य नजर आवे तो चन्द स्वर में वह कार्य करे। अस्थिर नजर आवे वह कार्य सूर्य स्वर में करे यह साधारण नियम है किन्तु प्रधानता स्थिर अस्थिर की ही रखना

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिये। स्थिर कार्य चन्द्र स्वर में ही करे और अस्थिर कार्य सूर्य स्वर में ही करे।

रोगोत्पत्ति का पूर्व ज्ञान और प्रतीकार।

पहिले लिखा जा चुका है कि स्वरों का उदय शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से तीन तीन दिन तक सूर्योदय के समय चन्द्रस्वर का उदय होता है और कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा से तीन तीन दिन तक सूर्योदय के समय प्रथम सूर्य स्वर का उदय होता है यह नैसर्गिक नियम है। तथापि—

"प्रतिपत्तोदिनान्याहुर्विपरीतेविपर्ययः।"

इसके अनुसार अगर श्वास विपरीत चले तो जरूर कोई आपत्ति आवेगी। यह प्रकृति का नियम है। प्राकृतिक कार्यों में उलट फेर होने से विकृति अवश्य ही होती है। जिस प्रकार रोग होने का मूल कारण वैद्यक शास्त्र में बात, पित्त और कफ इन दोषों का कुपित होता है। उसी प्रकार रोग निदान अन्य आपत्ति को पहले ही समझाने के लिये स्वरों का अस्वाभाविक उदय होता है। स्वरों के अस्वाभाविक होने का कारण और वात पितादी दोषों के कूपित होने का कारण एक मात्र मिथ्या आहार विहार के द्वारा स्वरों की नैसर्गिक चाल बदल जाती है। इसी से रोग और अन्यान्य आपत्तियाँ पैदा होती हैं। जिस प्रकार दोषों का सम्बन्ध आहार विहारादि से है, उसी प्रकार स्वरों को भी सम्बन्ध है। अगर सम्बन्ध नहीं होता तो क्या सबब कि दौड़ने में अधिक स्वास चलता है और बैठने में कम चलता है। निद्रा में बैठने से कुछ ज्यादह चलता है। मैथुन में सबसे अधिक चलता है। अवस्था के अनुसार जितनी श्वास की चाल है, उससे अधिक परिणाम में श्वाँस प्रश्वाँस का होना मनुष्य को शीघ्र अल्पायुषी बनाता है। इसलिये मैथुन त्याज्य है। जो मनुष्य अति स्त्री लम्पट

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं और निरन्तर विषय सेवन पाशविक वृत्ति से किया करते हैं, वे शीघ्र ही मृत्यु के मुख में ग्रसित हो जाते हैं। अपने जीवन में भी वे मृतक समान ही रहते हैं। मैथुन केवल सन्तानोत्पत्ति की अभिलाषा से प्राचीन समय में समझा जाता था--खेद है कि वर्तमान में पाशविक वृत्ति की तृप्ति और विषय भोग समझा जाने लगा। अतः श्वास प्रश्वास की गति नियमानुकूल होने से ही दीर्घजीवन प्राप्त करोगे। स्वरों की प्राकृतिक गति को चलाने के लिये शुद्ध आहार और शुद्ध आचरण की बड़ी आवश्यकता है। इसलिये शुद्ध खान पान रखो और शुद्ध आचरण करो।

❀ श्वास प्रश्वास की स्वाभाविक चाल ❀

(एक मिनट में श्वाँस प्रश्वाँस की गति)

१ महीने से	२ वर्ष की आयु तक	३५ बार होती है।
२ वर्ष से	६ " "	२३ " "
६ "	१२ " "	१० " "
१२ "	१५ " "	१८ " "

इसमें १८ बार का प्रमाण साधारण और स्वाभाविक है। बड़ी उमर के स्त्री पुरुषों का, गर्भिणी का और १५ वर्ष से जितनी ज्यादा उमर बढ़े उनके श्वाँस-प्रश्वास की गति तेज होती जाती है। परन्तु साधारण नियम १८ बार का ही है।

शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा तिथि को सवेरे नींद टूटने और सूर्य निकलते समय पहिले दाहिने नथने से अर्थात् सूर्यस्वरों से श्वाँस प्रश्वाँस आरम्भ हो तो, प्रतिपदा से पूर्णमासी तक गर्मी से कोई बीमारी शरीर में पैदा होगी। दूसरे कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा तिथि को सूर्योदय समय पहले बायें नथने से अर्थात् चन्द्र-स्वर से श्वास प्रश्वास आरम्भ होने पर प्रतिपदा से अमावश्या तक श्लेष्मा जनित अर्थात् सर्दी की कोई न काई बीमारी खड़ी हो जायगी।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोनों पक्षों में इसी प्रकार उलटे तौर पर उच्छ्वास वायु निकलने से शारीरिक या मानसिक किसी तरह की आफत अवश्य उठानी पड़ेगी। तीन पक्ष या ढेढ़ महीने लगातार ऐसा ही होने पर आदमीकी मृत्यु भी संभव है।

विपरीत स्वर का प्रतिकार।

अगर शुक्ल पक्ष या कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा को सवेरे स्वाभाविक नियम के विरुद्ध श्वास का निकलना जिस नथने से समझ पड़े तो वह नथना कई दिन बन्द रखने से बीमारी पैदा होने की दहशत नहीं रहती।

नथना बन्द करने की तरकीब।

६१—नथने में घुसने लायक साफ रुई की गाँठ जैसी बनावें और उसे बारीक कपड़े में रखकर जोड़ में सी डाले। अर्थात् रूई और कपड़े की नथने के बराबर गेंद बना लेवे। इस गाँठ से नथने का मुँह इस तरह बन्द करे, कि जिसमें उस नथने से श्वाँस बाहर से भीतर और भीतर से बाहर न हो सके। जिसे सिर की कोई बीमारी हो तथा जिसका दिमाग कमजोर हो वह रुई से नथना बन्द न करे। साफ वस्त्र और बारीक कपड़े की छोटी गाँठ से नथना बन्द करे। गाँठ का मतलब गोली बनाना है।

निःश्वास परिवर्तन का कौशल।

आत्मा ऐसी दिव्य बलवान वस्तु है कि जिसकी शक्ति के सामने कर्म रूपी आवरण शीघ्र ही भिन्न हो जाता है। तब स्वरों की चाल को अपने अधिकार में करना कौन बड़ी बात है। बुद्धिमान को स्वर के परिवर्तन तक कार्य करने की राह देखते हुए निठुल्ले नहीं बैठने चाहिये। अपने मर्जी के अनुकूल स्वर की चाल बदल देना बहुत आवश्यकीय शिक्षा है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"शुभान्यशुभकार्याणिक्रियतेऽहर्निशंयदा ।
तदाकार्यानुरोधेकार्यनाडीप्रचालनम् ॥"

अर्थात् जो शुभ अशुभ कर्म दिन रात्रि में किये जायें उन्हीं कर्मों के अनुरूप नाड़ी का चलन करना चाहिए। चाल परिवर्तन करने की क्रिया बहुत सुगम है। जरासी कोशिश करने पर स्वर की चाल बदल जाती है।

जिस नथने से श्वाँस निकलती हो, उसके दूसरे नथने को हाथ के अंगूठे से ही दबाये और श्वाँस चलने वाले नथने से ही हवा खींचे फिर उसे ही हाथ के अंगूठे से दबाकर पहले नथने का (जिससे श्वांस अन्दर नहीं ली) अंगूठा ढीला कर हवा निकाल डाले। बार-बार कुछ देर तक ऐसा करने से जरूर ही श्वाँस की चाल बदल जायगी।

दूसरा प्रकार—

जिस नथने से श्वाँस निकलती हो, उसी तरफ को लेटने से और पहले की समान कृति करने से अथवा सिर्फ लेटने से ही थोड़ी देर में श्वाँस की चाल बदल जाती है।

बाएँ नथने से श्वाँस चल रही हो और दाहिने नथने से श्वाँस चलाने की जरूरत हो तो बाएँ करवट लेट जाइए दाहिना स्वर चलने लगेगा। उसी प्रकार दाहिना स्वर चल रहा है और ब.एँ स्वर की इच्छा हो तो दाहिना करवट लेट जाइए बायाँ स्वर चलने लगेगा।

पवन विजयी कौन हो सकता है।

उपरोक्त निश्वाँस परिवर्तन कौशल हृदयस्थ कर लेना चाहिये। जहाँ जहाँ निःश्वास परिवर्तन के नियम बनाये जायेंगे वहाँ पर इसी कौशल का अवलम्बन बाँध श्वाँस की चाल बदलना होगा। जो पुरुष वा स्त्री अपनी मर्जी के अनुसार वायु

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकाल और पैठा सकता है, वही पवन को जीत कर पवन विजयी कहलाता है।

बिना औषध रोगों की चिकित्सा का उपाय।

(अर्थात् प्राकृतिक रोग प्रतिषेध प्रणाली)

नियमों के अनुकूल काम न करने से जैसे मनुष्य के शरीर में बीमारी पैदा होती है, वैसे ही दवा सेवन न करने पर केवल भीतरी चाल से बीमारी हटाने की भी युक्ति प्रस्तुत है। भारतवासी वर्तमान में अपने अज्ञान से ही रोग ग्रस्त और दुर्बल हुए हैं। अगर हम अपने प्राचीन महर्षियों के बचनानुसार कर्तव्य पथ पर आरूढ़ रहते तथा नियमानुकूल आचरण करते, तो हम लोग इतना दुर्बल रोगी और निर्धन कभी नहीं होते।

आजकल जो बिनौषधि चिकित्सा जिन्होंने अमेरिका, जर्मनी और इंगलैंड आदि देशों से हैड्रोपेथी (जलोपचार), इलेक्ट्रोपैथी (विद्यु त क्रिया) क्रोमोपैथी (जल, वर्ण और किरण द्वारा चिकित्सा) मेंटलहीलिंग [मानसिक चिकित्सा] सजेस्टिह्न (सूचना) और उपवास चिकित्सा वगैरः अनेक उपचारों में प्रवीण होकर यहाँ पर चिकित्सा कर रहे हैं। बिनौषधि चिकित्सकों का कर्तव्य है कि अपने प्राचीन महर्षियों के अनन्त उपकारों से कृतघ्न न होकर अपनी विद्या की अपने द्वारा उन्नति होने की चेष्टा करते रहें। हमारा भावी कल्याण भी इसी से है।

—स्वरविज्ञान (प्राणायाम) के द्वारा आगे रोग उपचार किस प्रकार होता है वह संक्षेप में अनुभव और बुद्धि से बताया जाता है।

—जिस समय इस स्वर विज्ञान शास्त्र की पूर्णतया उन्नति होगी, उस समय स्वरोपचार के द्वारा भारतवर्ष ही क्या प्रायः समस्त भूमंडल के इस प्रणाली द्वारा आरोग्य लाभ कर सकेंगे।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वरोपचार अर्थात् प्राणायाम द्वारा चिकित्सा की विधि लिखने से पूर्व श्वासोच्छ्वास रहस्य को बतला देना परमावश्यक है। उपवास चिकित्सा रोगों के प्रारम्भ समय में करना लाभदायक होता है। वैदिक चिकित्साओं के विषय में जहाँ तक हो सके स्थूल से सूक्ष्म चिकित्सा की और विशेष भक्ति रखकर उससे यथावसर लाभ उठाने का प्रयत्न करना चाहिये।

श्वासोच्छ्वास रहस्य

प्राणायाम चिकित्सा से पूर्व प्रथम श्वासोच्छ्वास क्रिया के रहस्य को जान लेना परमावश्यक है। प्रत्येक व्यक्ति के ध्यान में रहे कि जीवन पूर्णतया श्वासक्रिया पर अवलम्बित है। श्वास ही जीवन है। केवल उच्च श्रेणी ही के जन्तु जीवन के लिये श्वास पर अवलम्बित नहीं हैं, वरन नीची श्रेणी के जन्तुओं को भी जीने के लिये अवश्य श्वास लेना पड़ता है। पौधों की जाति को भी वैसे ही लगातार जीवन के निमित्त, हवा का आश्रय लेना पड़ता है। वृद्ध मनुष्य निर्बल श्वास छोड़ता है, श्वांस लेना बन्द कर देता है और बस उसके जीवन का अन्त है अर्थात् जीव केवल श्वास ही की एक शृंखला है। शरीर की क्रियाओं में से श्वास लेना अत्यन्त प्रधान क्रिया है, क्योंकि दूसरी क्रिया इसी के आश्रित रहती हैं! मनुष्य भोजन के बिना कुछ समय तक जी सकता है, पानी के बिना उससे भी लघुतर समय तक जी सकता है, परन्तु बिना श्वास लिये उसका जीवन केवल कतिपय क्षणों ही तक रह सकता है। जीवन के लिये मनुष्य केवल श्वास पर अवलम्बित ही नहीं है, किन्तु लगातार जीवट और बीमारियों से छुटकारा पाने के लिये उसे ठीक ठीक श्वास लेने की आदत का बहुत बड़ा सहारा लेना पड़ता है इसके विपरीत असावधानी और लापरवाही से श्वास लेना हमारे जीवन को घटाकर के और हमें रोगों का निशान बना करके हमारे जीवन को घटा देगा। मनुष्य

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को, उसकी असली अवस्था में श्वास लेना सिखलाने की आवश्यकता न थी। नीच जन्तुओं और बच्चों की भांति वह स्वाभाविक और उचित रीति से श्वास लेता था, जैसा कि प्रकृति की इच्छा थी, परन्तु सभ्यता ने उसे इस ओर अन्य विषयों में क्या का क्या कर डाला उसने चलने, बैठने और खड़े होने में अनुचित तरीकों को धारण कर लिया, जिन्होंने स्वाभाविक और सही रीति से श्वास लेना उससे छीन लिया। इस तरह उसने सभ्यता के मूल्य में बहुत ही बड़ी चीज दे डाली। जङ्गली मनुष्य आज भी असली रीति से श्वांस लेता है, यदि सभ्य मनुष्यों की आदतें उसे भी जाकर भ्रष्ट न कर डालें। सभ्यमनुष्यों में सही श्वांस लेने वालो की औसत प्रति सैकड़ा बहुत ही कम है, और परिणाम में सिकुड़ी हुई छातियाँ, झुके हुये कन्धे और श्वांस लेने के यन्त्रों में भयंकर बीमारियों की वृद्धि, जिसमें वह भीषण राक्षस जिसे क्षयी कहते हैं, सम्मिलित है देखने में आती हैं। प्रत्येक समय ध्यान में रहे की शारीरिक स्वास्थ्य सही श्वांस लेने पर विशेष रूप से अवलम्बित है। श्वास विज्ञान के समझने और अभ्यास करने से शारीरिक लाभों के अतिरिक्त स्वच्छ दृष्टि, सदाचार और यहाँ तक कि उसकी आध्यात्मिक उन्नति भी हो जाती है। कहाँ तक कहें, इसका अभ्यास करने से आश्चर्यजनक उन्नति दीख पड़ेगी।

श्वास लेने के अवयव

श्वांस लेने के अवयव फेफड़ा और उससे जुटी हुई हवा जाने की नालियाँ हैं। फेफड़े संख्या में दो हैं और वक्षस्थल [छाती] की कोठरी में मध्यरेखा के दोनों ओर एक एक रहते हैं। हृदय, रुधिर और हवा की बड़ी नालियाँ बीच में पड़कर दोनों फेफड़ों को एक दूसरे से पृथक् करती हैं। हवा जाने की नालियाँ नासिका के अन्तरङ्ग भाग घोघा और घोंघे को फेफड़ों से जोड़ने वाली

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नालियों से बनी हैं। जब हम श्वास लेते हैं तब हम वायु को नाक के मार्ग से खींचते हैं। नाक के भीतर भींगे पर्दे के सम्पर्क से वह हवा कुछ गरम हो जाती है। अच्छी तरह श्वांस लेने वालों को जुकाम नहीं होता, क्योंकि उनके शरीर में स्वच्छ और ऊष्णरुधिर बना रहता है। अपूर्ण और अधूरी श्वांस लेने में फेफड़ों की लाखों कोठरियों में से केवल थोड़ी सी कोठरियों में काम होता है। बहुत सी कोठरियाँ बन्द रहती हैं। धीरे धीरे उन कोठरियों की काम करने वाली शक्ति भी जाती रहती है। ज्यों ज्यों फेफड़ा कम काम करता है, त्यों त्यों शरीर में प्राण-प्रद वायु का संचार कम होता जाता है। मनुष्य का शारीरिक कल्याण तभी होगा जब वह फिर प्रकृति के असली राह पर आवेगा।

प्राण क्या है।

अब प्राण क्या है ? इस गुप्त शक्ति पर विचार आरम्भ करता हूँ। प्राण एक संस्कृत शब्द है जिसका अर्थ सार शक्ति होता है और हृदयस्थ वायु का नाम है। यह प्राण शक्ति का मूल है जो सब सजीव वस्तुओं में प्रकाशित है और जो निर्जीव वस्तुओं से सजीव वस्तुओं को पृथक् करता है। हम लोग इसे जीवन का उद्योतक या संजीवनी शक्ति कह सकते हैं। प्राण केवल शक्ति का एक रूपान्तर है, जिसको जीवात्मा अपने भौतिक विकास में धारण कर लेता है। जबतक जीवात्मा इसे अपने अधिकार में रखता है, संयोग बना रहता है और सब परमाणु जीवात्मा की प्रेरणा से एकत्र संगठित रहते हैं। जब जीवात्मा अपने वियोग समय में अपने अधिकार को त्यागता है तब अप्रयुक्त (फाजिल) प्राण उसी महत् प्राण-भण्डार में जा मिलता है, जहाँ से कि वह आया था। वह प्राण हवा में रहता है पर वह हवा नहीं है और न हवा के बनाने वाले तत्वों में से ही कोई है। स्थावर और जंगम जीव हवा के साथ इसे श्वास द्वारा ग्रहण करते हैं, और यदि हवा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में यह न मिला रहता तो वे मर जाते, चाहे वे हवा से भरपूर ही क्यों न रहते। वायु मण्डल की हवा में प्राण रहता है, परन्तु यह अन्यत्र भी रहता है, और यह उस जगह भी व्यापक है जहां हवा नहीं पहुँच सकती। हम लोग श्वास द्वारा हवा को भीतर खींचा करते हैं, वह हवा प्राण से भरी रहती है और हम लोग हवा से प्राण लेकर अपने कार्य में लगाते हैं। वायु मण्डल की हवा में प्राण स्वच्छन्द रूप से पाया जाता है, यह वायु मण्डल की हवा में जब ताजी रहती है तब उसमें खूब प्राण रहता है। हम लोग प्राण को अन्य वस्तुओं की अपेक्षा हवा से बड़ी सरलता से ले सकते हैं। योगी लोग जानते हैं कि कैसी श्वांस लेने से अधिक मात्रा में प्राण प्राप्त हो सकता है और अपने अभीष्ट कार्य के लिये उसी रीति से प्राण प्राप्त कर लेते हैं। इस भांति वे अपने शरीर के सब भागों ही को शक्ति सम्पन्न नहीं बना लेते किन्तु इसी के द्वारा वे अपने मस्तिष्क में अधिक प्राण भेज कर गुप्त शक्तियों को प्रगट कर लेते हैं और दैवी तथा आध्यात्मिक शक्तियाँ प्राप्त कर लेते हैं। जो मनुष्य जान बूझ कर या अनजाने से प्राण एकत्रित करने के विधानों पर चलता है उसके शरीर से जीवट और शक्ति का तेज निकला करता है और जो लोग उसको जानते हैं उसके तेज का अनुभव करते हैं। ऐसा मनुष्य दूसरों को भी शक्ति प्रदान कर सकता है और उन्हें जीवट और स्वास्थ्य दे सकता है जिसको आकर्षण द्वारा रोग दूर करना कहते हैं वह इसी प्रकार किया जाता है। बहुत से आकर्षण द्वारा रोग दूर करने वाले यह जानते ही नहीं कि उन्हें यह शक्ति कैसे प्राप्त हुई। जब यह स्मरण रहेगा कि अधिकांश प्राण हवा ही में से श्वास द्वारा लेता है तब सही श्वास लेने की महिमा शीघ्र समझ में आ जायगी।

नाड़ी संस्थान।

मनुष्य के शरीर की नाड़ी—सम्प्रदाय दो बड़े विभागों में

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभक्त हैं अर्थात् एक मस्तिष्क से लेकर रीढ़ की हड्डी [मेरु दण्ड] के साथ साथ लम्बा दौड़ा हुआ है जिसे मस्तिष्क मेरूदण्ड विभाग कहते हैं, और दूसरी छाती, पेट और पेट के नीचे के भाग में फैला है इस दूसरे को सहानुभावी विभाग कहते हैं। जो विभाग मस्तिष्क से रीढ की हड्डी के साथ लम्बा फैला हुआ है उसकी बहुत सी शाखाएँ जगह जगह से निकल कर सारे शरीर में जाल की तरह फैली हुई हैं, वैसे ही सहानुभावी विभाग की शाखाएं भी निकल निकल कर सारे शरीर में फैली हुई है। पहला विभाग शरीर के बाहर के पदार्थों का ज्ञान प्राप्त करता है तथा बाहरी जगह पर कार्य करता हुआ उसके साथ लगाव रखता है, जैसे देखना सुनना, स्पर्श ज्ञान, हाथ हिलाना, पैर हिलाना, इत्यादि। दूसरा विभाग केवल शरीर के भीतर ही क्रियाओं से सम्बन्ध रखता है, जैसे शरीर का बढ़ाना, अन्न पचाना, रुधिर संचार इत्यादि। पहले विभाग द्वारा जीवात्मा सोचता, विचारता और ज्ञान का अनुभव करता है। यह वह औजार है जिसके द्वारा जीवात्मा वाह्य जगत् से सम्बन्ध रखता है। यह विभाग टेली-फोन विभाग की भाँति है, मस्तिष्क जिसका सदर दफ्तर है, मेरुदण्ड सदर तार है और अन्य तन्तु जाल टैलीफोन की शाखाएँ हैं। मस्तिष्क या भेजा, गुद्दे की ढेरी है। इसके तीन भाग हैं। पहिला मस्तिष्क खास (Cerebrum) है जो खोपड़ी के ऊपर वाले, अगले मध्य और पिछले भागों में रहता है दूसरा है छोटा मस्तिष्क (Cerebellum) जो कि खोपड़ी के नीचे वाले पिछले भाग में रहता है तीसरा (medula oblangata) मडला अवलांगेटा–मेरुदण्ड का आदि भाग है जो छोटे मस्तिष्क सामने आगे से शुरू हो जाता है वास्तविक मस्तिष्क अर्थात् पहला भाग मनके उस खंड का औजार है जो बुद्धि सम्बन्धी कार्य करता है। छोटा मस्तिष्क इच्छानुवर्त्तिनी मांस पेशियों में गति का संचार करता है मडुला अवलांगेटा मेरुदण्ड का छोर है,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इनसे मस्तिष्क से ज्ञान तन्तुएँ निकल कर शाखा प्रशाखा में विभक्त होकर सिर के प्रत्येक भाग में फैल जाती हैं और इधर प्रत्येक इन्द्रिय में फैलती हैं एवं छाती, पेट तथा श्वांस लेने वाले किसी अवयव में भी आती हैं। रीढ़ की हड्डियां जो नीचे से ऊपर तक एक नाली बनाती हैं, उसमें भी गुद्दी भरी रहती है, उसे मेरुदण्ड कहते हैं। यह गुद्दी की लम्बी छड़ी सी है। थोड़ी थोड़ी दूर पर इसमें से शाखाएँ फुटती हैं और नाड़ी तन्तु जाल द्वारा शरीर के प्रत्येक अङ्ग प्रत्यङ्ग में फैल जाती हैं। मेरु-दण्ड टेलीफोन का सदर तार है और तन्तु जाल उसकी शाखाओं के तार हैं। सहानुभावी विभाग में नाड़ी गुच्छक [Ganglia] की दो शृंखलाएं मेरू दण्ड के दाहने बाएं दोनों ओर हैं — जिन्हें पिङ्गला और ईडा नाड़ी कहते हैं इस शृंखला के अतिरिक्त सिर, गले, छाती और पेट में भी नाड़ी गुच्छक हैं। नाड़ी गुच्छक को जिसमें नाड़ी कण भी सम्मिलित होते हैं गद्दीकी ढेरी [Gang ion] कहते हैं। ये गुच्छक एक दूसरे से तन्तु द्वारा नथे हुए रहते हैं, और प्रथम विभागसे जिसे मस्तिष्क — मेरू विभाग कहते हैं, ज्ञान तन्तुओं और शक्ति तन्तुओं द्वारा नथे रहते हैं। इन्हीं ढेरों से अगणित तन्तु निकल कर शरीर के अवयवों और रुधिर की नालियों इत्यादि में जाल की भाँति फैले रहते है। कई स्थानों पर ये तन्तु एकत्रित होकर मिल जाते हैं जिन्हें —नाडि ग्रन्थि वा चक्र[plexuses] कहते हैं। सहानुभावी विभाग उन कार्य्यों का निरीक्षण करता है जो कार्य शरीर में हमारी इच्छा का आश्रय न करके भी होते रहते हैं, जैसे रुधिर संचार श्वांस-क्रिया और पाचन इत्यादि। जब ये बातें ध्यान में लाई जावेगी तब प्राण संचय का महत्व लोगों के मन पर बैठेगा, और जब श्वास विज्ञान की महिमा उस दर्जे से भी आगे बढ़ जायेगी जिस दर्जे तक कि पाश्चात्तय वैज्ञानिक इसकी महिमा बताते हैं। इस तन्तु जालके सम्बन्ध में हमारे देश के योगियों की शिक्षा पश्चिमी विज्ञान से आगे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बढ़ जाती है। योग शास्त्र कहता है कि यह शौर्य केंद्र तन्तु विभाग का अत्यन्त प्रधान अंग [चक्र] है। यह भी एक प्रकार का मस्तिष्क है और मनुष्य शरीर का कार्य यही करता है। पश्चिमी विज्ञान भी कुछ इसकी महिमा समझने की ओर झुकता जाता है, परन्तु पूर्वी योगियों की तो इसकी प्रभुता शताब्दियों से विदित है। यह सौर्य तन्तु केन्द्र पर चोट लगने से मनुष्य तत्काल मरते हुए जाने गये हैं। पहलवान लोग भी इतना ज्ञान रखते है कि अपने प्रतिद्वंदीके इसी मुकाम पर चोट पहुँचा कर उसे बल हीन कर देते हैं।

नाक से श्वाँस लेना या मुँह से श्वाँस लेनां।

मनुष्य को सदैव नाक से श्वाँस लेना चाहिए। यदि मुँह से श्वाँस लेने की आदत पड़ गयी हो तो उस आदत को छोड़ देना चाहिए। परमात्मा मुँह को केवल बोलने तथा भोजनादि करने के लिए बनाये हैं। नाक से श्वांस लेने से बल और स्वस्थ्य लाभ होता है और मुँह से श्वांस लेने से बीमारी और निर्बलता भोगनी पड़ती है। इस मुँह से श्वांस लेने वाली घृणित आदत के कारण अनेक संक्रामक बीमारियाँ हो जाती हैं। जुकाम और सर्दी की अनेक घटनायें इसी से हुआ करती हैं। श्वाँस लेने से अवयवों की रक्षा की सामग्री, जैसे धूल निवारक छनना इत्यादि नाक ही में बनी है। मुख में श्वसन यन्त्रों की रक्षा के लिये कोई प्रबन्ध नहीं है और सर्द हवा, धूल धक्कड़ एवं कीटाणु बड़ी आसानी सें उस फाटक की राह फेफड़ों में पहुँच जाते हैं। यदि किसी को नाक द्वारा श्वांस लेने की आदत न हो तो पहिले वे इसकी आदत डालें और इसको साधारण और तुच्छ समझकर छोड़ न दें। प्रत्येक मनुष्य को ऊँची श्वांस, मध्य श्वांस, नीची श्वांस लेने तथा बाहर फेंकने की अपेक्षा पूरी श्वांस लेने और बाहर निकालने का अभ्यास रखना चाहिये। पूरी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्वांस लेने की आदत रहने से आकस्मिक रोगों से यथा सम्भव निर्भयता रहती है।

पूरी श्वांस का साधन।

पूरी श्वांस में यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक श्वास में फेफड़े पूरी पूरी हवा से भर दिये जावें। पूरी श्वास द्वारा हवा की औसत मात्रा भीतर खींचा जावे और उसे फेफड़ों के सब भागों में वितरित कर दें, चाहे हवा थोड़ी हो या बहुत परन्तु दिन में कई बार तो अवश्य पूरी पूरी श्वास श्रृंखला वद्ध लेनी ही पड़ेगी। जभी अवसर मिल जाये तभी इसका अभ्यास कर लेना चाहिये, इससे शरीर अच्छी रीति से और अच्छी दशा में रहता है। पूरी श्वास साधन निम्न प्रकार करना चाहिये :—

(१) हिचक हिचक कर श्वास न लेकर लगातार धीरे धीरे श्वास दो सेकंड में पूरी करना चाहिये।

(२) कुछ सेकंड तक श्वांस को भीतर ही रोक रखना चाहिये।

(३) छाती को स्थिर स्थिति में रक्खे हुये और पेट को थोड़ा सा भीतर खींचकर बहुत धीरे धीरे श्वांस से बाहर निकाला, और ज्यों ज्यों हवा आती जाये त्यों त्यों पेट भीतर की ओर दबता जाय। जब कुल हवा बाहर आ जाय तब छाती और पेट को ढीला कर दो। थोड़ा अभ्यास करने से फिर बाद को थोड़ी ही इच्छा करने से यह आसानी से होने लगेगा। यह पूरी श्वांस एक ऐसी श्वांस है कि जिसमें ऊँची मध्य और नीची श्वांस सम्मिलित हैं, और तीनों एक दूसरे से बड़ी तेजी के साथ ऊपर लिखी हुई तरकीब से इस प्रकार जुट जाती हैं कि एक लगातार और पूरी श्वांस बन जाती है।

पूरी श्वांस का फल।

पूरी श्वांस लेने वाला, पुरुष हो वा स्त्री, क्षयी रोग और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फेफड़ों के अन्य रोगों से तो बिल्कुल ही निर्भय हो जाता है, सर्दी जुकाम होने की सम्भावना जाती रहती है। अधूरी श्वास लेने से फेफड़े का अधिक भाग बेकार रहता है और ऐसे ही बीमारियों के कीटाणुओं को आवाहन करते हैं, ये कीटाण रुग्ण अंग में डेरा जमाकर फिर तो तहलका मचा देते हैं। यदि फेफड़ों के अवयव अच्छे स्वस्थ रहेंगे तो वे कीटाणुओं को दबा बैठेंगे फेफड़ों के अंगों को अच्छा और स्वस्थ रखने क यही एक उपाय है। कि उनसे काम ले लेकर उन्हें खूब दृढ़ बनाये रहें।

दीर्घ श्वास प्रश्वास की क्रिया।

दीर्घ श्वास प्रश्वास की क्रिया प्रातः और सायंकाल नित्य करना चाहिये। ऐसा करने से श्वास प्रश्वास की गति २४ घंटे तक ठीक रीति से रहना सम्भव है। गहरी श्वास जब लेना हो तो होठों को एक दूसरे के बल से खूब दबाये रखना चाहिये। दोनों होठों को बन्द करने से अपने ऊपर जब्त करने की ताकत की तरक्की होती है। यदि यह देखना स्वीकार हो कि मनुष्य नकुओं की राह से श्वास लेने की क्रिया का अभ्यास कितनी बढ़ा सकता है तो पहिले मामूली तौर से जम्हाई लो—उसके पश्चात् होठों को बन्द करके नकुओं की राह जम्हाई लेने की कोशिस करो तुम इसका अन्दाजा नहीं कर सकते कि इस प्रकार जम्हाई लेना कितना लाभदायक हो सकता है मुख बन्द करके जम्हाई लेना और मुख बन्द करके श्वास लेने से कुछ दिन पीछे सोते समय भी मुख का बन्द रहना और सम्भव हो जायेगा सदैव ध्यान में रहे कि प्रत्येक समय शुद्ध वायु में रहना और उसमें श्वास लेना आरोग्यता के लिये आवश्यक है, लेकिन इनके साथ इतनी जानकारी और आवश्यकता है कि प्रत्येक श्वास में फेफड़े में जितनी सम्भव हो वायु भरे और छाती पर किसी प्रकार की तंग कोशिस कभी न रक्खे। प्रतिदिन और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिन में कई बार कोई ऐसी तेज व्यायाम कर लिया करें कि मजबूरन हाँपना पड़े।

व्यायाम।

प्रातः सायं कुछ दूर तक की यात्रा करे, अथवा थोड़ी दूर की दौड़ लगना चाहिये। परन्तु रोगियों को थकाने वाला व्यायाम कभी न करना चाहिये। इसके लिये इतना व्यायाम पूर्ण है जिससे रुधिर के चक्र में तेजी आजाए और श्वास शीघ्रता से लेने लगे। दिन में कई बार ठहर ठहर कर दो चार गहरी गहरी श्वास ले लेना बहुत लाभदायक है। ठंडे पानी से स्नान भी इसको लाभदायक है कि इसमें अवश्य गहरी श्वास लेनी पड़ती है। तैरने में भी यही है क्योंकि इसमें जिल्द और फेफड़े दोनों पर बल पड़ता है।

फेफड़ा साफ करने वाली श्वांस क्रिया।

जिस समय वक्ता या व्याख्यान दाता अथवा गवैया जब बोलने या गाते गाते थक गये हों और उनके श्वासावयव स्थगित हो गये हों उस समय उन्हें निम्न प्रकार क्रिया करनी चाहिये। यथा:—

[१] पूरी श्वांस लेना।

[२] हवा को कुछ सेकंड तक रोक रखना।

[३] ओठों को बटोर कर, जैसे सीटी बजाने में ओंठ बटोरे जाते हैं [परन्तु गाल न फूलने पावे] तब ओठों के बीच के छिद्र से थोड़ी हवा बड़े जोर से फेकना चाहिये। फिर थोड़ा रुक जाओ, शेष हवा भीतर ही रुकी रहे, फिर थोड़ी हवा फेको। तब तक इसी प्रकार करते जाओ जब तक कुछ हवा न निकल जावे। इस प्रकार तीनों रीतियों से व्यायाम कर लेने से फिर मनुष्य ताजा हो जायगा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुखदायिनी और शक्तिवर्धिनी श्वास क्रिया

[१] सीधे खड़े हो। [२] पूरी श्वांस भीतर खींचो और उसे भीतर ही रोक रक्खो। [३] भुजाओं को अपने सामने सीधा फैलाओ जिसमें वे बहुत कड़ी न होने पावें और ढीली रहें, केवल इतना ही बल लगाओ कि जिसमें वे तुम्हारे सामने सीधी लम्बायमान रहें। [४] धीरे धीरे हाथों को पीछे कंधों की ओर लाओ, क्रमशः मांस के पट्टों को संकुचित करते जाओ और उनमें अधिक जोर डालते जाओ कि जिसमें कन्धों तक पहुँचते पहुँचते मुट्ठियाँ इतने जोर से बँध जावें कि उनमें कंप कंपी की गति प्रतीत होने लगे। [५] तब पट्टों पर वैसा ही जोर लगाये हुए मुठियों को फिर सामने की ओर आगे बढ़ाओ और फिर जोर लगाये हुए ही उन्हें तेज़ी से पीछे कंधों पर लाओ। कई बार ऐसा करो। [६] मुँह के द्वारा जोर से श्वांस को बाहर निकालो। [७] उपरोक्त सफाई वाली क्रिया कर डालो। इन उपायों को करने से ज्ञान के तन्तुओं में अपूर्व शक्ति उत्पन्न होती हैं।

स्वरीली ध्वनि (आवाज) बनाने की श्वांसक्रिया

[१] बहुत धीरे धीरे पूरी श्वांस नाक द्वारा भीतर खीचो। श्वांस पूरी खींचने में जहाँ तक अधिक समय लेते बने लो। [२] कुछ सेकंड तक रोक रक्खो। [३] खूब चौड़ा मुँह खोल कर एक दम से कुल हवा बड़े जोर से बाहर निकाल दो [४] सफाई वाली श्वांस क्रिया द्वारा फेफड़ों को आराम दे दो।

दुर्गन्धित श्वांस निवारण विधि।

(१) सीधे खड़े हो। (२) पूरी श्वांस भीतर खींचो। (३) तब तक हवा को भीतर ही रोक रक्खो जब तक आराम से

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोक सको । (४) मुँह खोल कर जोर से हवा बाहर निकाल दो (५) सफाई करने वाली क्रियाकर डालो । यदि किसी प्रकार से फेफड़ों में श्वास की हवा रह गई हो । सफाई हो जाती है, फेफड़े की दुर्गन्धित वायु को साफ करती है, जैसे जुलाब अंतड़ी को साफ करता है । इस क्रिया को प्रातः सायं सात सात बार करनी चाहिये ।

रुधिर संचारक विधि ।

(१) सीधे खड़े हो (२) पूरी श्वांस भीतर खींचो और उसे रोको । (३) थोड़ा आगे झुको और किसी बेत या छड़ी को दृढ़ता से पकड़ो और क्रमशः उस बेत को जोर से दबाने में अपना पूरा बल लगादो । (४) पकड़ को छोड़ दो, पहिली स्थिति पर आ जाओ और धीरे धीरे श्वास को बाहर निकालो । (५) इसे कई बार करो । (६) फेफड़ा साफ करने वाली क्रिया करके समाप्त कर दो । इस साधन को बिना छड़ी या बेत के भी कर सकते हो । इससे रगों का रुधिर सर्वत्र यथा विधि पहुंच जाता है ।

कम्प और ताल युक्त श्वांस क्रिया ।

सब कुछ कांप रहा है । छोटे से छोटे परमाणु से लेकर बड़े से बड़े सूर्य्य तक सब कम्पायमान दशा में हैं । प्रकृति में कोई भी वस्तु अत्यन्त निश्चल स्थिति में नहीं है । यदि एक परमाणु भी कम्परहित हो जाय तो सारे विश्व को नष्ट कर दे लगातार कंप में विश्व का कार्य हो रही है । जड़ परमाणुओं पर शक्ति की लगातार प्रेरणाँ हो रही है जिससे अनगिनित रूप और असंख्य भेद उत्पन्न हुआ करते हैं, तथापि ये रूप और भेद भी स्थायी नहीं हैं । ज्योंही ये बन जाते हैं परिवर्त्तन आरम्भ हो जाता है और इनसे अनगिनत रूप उपजाते हैं जो स्वयं परिवर्तित होकर और नये नये रूप खड़े कर देते हैं, और योंही अनन्त काल तक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋंखला चली जाती है। इस रूप की दुनियां में भी कुछ भी स्थायी नहीं है तथापि महत्ती सत्यता परिवर्तन हीन है। रूप केवल दिखावे मात्र हैं—वे आती हैं, जाती हैं, परन्तु सत्यता अटल और परिवर्तन हीन है। मनुष्य शरीर के परमाणु भी अनवरत कम्प में हैं। अनन्त परिवर्तन हो रहे हैं। थोड़े ही महीनों में शरीर बनाने वाले परमाणुओं में पूरा परिवर्तन हो जाता है और जो परमाणु इस समय तुम्हारे शरीर को संगठित किये हुए हैं उनमें से एक परमाणु भी कुछ महीनों के पश्चात् न पाया जायगा। कम्प, लगातार कम्प ! परिवर्तन, लगातार परिवर्तन !! कुछ कम्प में एक ताल पाया जाता है। ताल विश्व में व्यापक है। सूर्य के चारों ओर ग्रहों का घूमना, ज्वार और भाटा, ये सब ताल नियम के अनुयायी हैं। सूर्य्य की किरणें हम तक पहुँचती हैं, वृष्टि हम तक आती है ये सब उसी नियम के अनुसार होते हैं। सब वृद्धि इसी नियम की प्रदर्शनी है सब गति इसी ताल के नियम का विकाश है। हमारा शरीर भी इस ताल के नियम का वैसा ही अनुवर्त्ती है जैसे ग्रह सूर्य्य के चारों ओर घूमने में इस नियम के अनुवर्त्ती हैं। योगी का आभ्यान्तरिक श्वास विज्ञान बहुत कुछ प्रकृति के इस विदित नियम के आधार पर है। शरीर के ताल का अनुसरण करने से योगी बहुत सा प्राण खींचने में समर्थ होता है, जिसको वह अभीष्ट कार्य के सम्पादित करने में लगाना है उठना और दबना सारा कार्य लहर और ताल के अनुसार हो रहे हैं। प्राकृतिक दशा में तो हम लोग जीवन के महासमुद्र के कम्प और ताल को पाते रहते हैं। हम लोगों ने सुना है कि कोई राग, वेला बाजे पर यदि बार बार ताल के साथ बजाया जाय तो ऐसे कम्प को संचालित करता है जो एक समय में एक पुल को बरवाद कर सकता है। ऐसा परिणाम उस समय भी सत्य होता है जब सिपाहियों की एक पलटन पुल पार करने लगती है। उस समय सर्वदा आज्ञा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया जाता है कि ऐसे अवसर पर एक साथ कदम उठाने का नियम भंग कर दिया जाय, नही तो शायद कम्प पुल और पलटन दोनों को ले बैठे तालयुक्त गति के प्रभावके ऐसे उदाहरणों से तुम्हें विदित होगा कि ताल युक्त श्वांस लेने से शरीर पर कैसा प्रभाव पड़ सकता है। सारा शरीर कम्प को ग्रहण करता है और दृढ़ संकल्पसे मेल मिला लेता है, जिससे फेफड़ों की ताल पूर्वक गति होती है और जब वह ऐसे मेल में हो जाता है तो दृढ़ संकल्प (Will)की आज्ञाओं का अनुसरण करने लगता है। जब शरीर इस प्रकार ताल के अनुवर्त्तन योग्य चढ़ जाता है। तब योगी को अपने संकल्प की आज्ञा के अनुसार शरीर के किसी भाग में अधिक रुधिर संचालन करने में कठिनता नहीं होती और इसी भांति वह तन्तु बलको किसी अंगया अवयव में अधिक मात्रा के साथ भेज सकता है। जिससे उस अंग या अवयव को दृढ़ता और उत्तेना मिलती है। इसी प्रकार योगी ताल युक्त श्वास द्वारा प्रकृति के कम्पायमान प्रवाह को पकड़ लेता है, और अति अधिक प्राणको खींचने और अधिकृत करने के योग्य हो जाता है और तब वह प्राण उसकी इच्छा के आश्रित रहता है। वह उस प्राण को, अपने विचार दूसरों के पास भजने में साधन की भांति प्रयोग कर सकता है और करता है, और वैसे ही दूसरों के विचारों को, जो उसी कम्प में संयुक्त रहते हैं, अपने पास आकर्षित करता है। दूरस्थ पदार्थों का अनुभव करना, अपने विचार दूसरों के पास भेजना और दूसरों के विचारों को अपने आप जान लेना मानसिक क्रिया द्वारा रोग छुड़ाना, मिस्मेरिज्म इत्यादि विषय, जो आजकल पश्चिमी संसार में इतनी रोचकता उत्पन्न कर रहे हैं, और जिन्हें योगी लोग शताब्दियों से जानते हैं वे और भी पुष्ट और स्पष्ट हो सकते हैं यदि प्रयोग करने वाला प्रयोजक ताल युक्त श्वांस लेने के पश्चात् इन प्रयोगों को करे। ताल युक्त श्वास मानसिक प्रयोगों अथवा आकर्षण द्वारा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोग चंगा करने में कई गुना अधिक लाभ करेगा। इस विषय में हमारे लिखित 'मनोयोग' पुस्तक को विशेष रूप से देखना चाहिये। इसी ताल युक्त श्वास को प्राणायाम कहते हैं। इसमें विशेष बात ग्रहण करने की यह है कि ताल का मानसिक परिज्ञान प्राप्त कर लिया जाय। उन लोगों को, जो संगीत में कुछ जानकारी रखते हैं तुली हुई गिनती की अभिज्ञता होती है। दूसरों के, लिये जंगी सिपाहियों का क़दम, 'बायां' 'दहना' 'बायां' 'दहना' 'बायां' 'दहना' एक, दो, तीन, चार, एक, एक, दो, तीन, चार अच्छी तरह भावना दे सकता है। योगियों के प्राणायाग का यह नियम है कि श्वास खींचने (पूरक प्राणायाम) और श्वास छोड़ना (रेचक प्राणायाम) में बराबर मात्राएं हों श्वास भरने (कुम्भक) और श्वास खाली हो जाने पर रोकों की मात्रा भरने और खाली करने की मात्रा की आधी होना चाहिये। ताल युक्त श्वास का नीचे लिखा हुआ अभ्यास पूरी तरह समझ कर अभ्यस्त कर लो, क्योंकि इसी के आधार पर अनेक अभ्यास हैं जिनको आगे चल कर सूचित किया जायगा।

तालयुक्त श्वास का साधन

(१) सीधे अपने आराम के आसन से बैठो, पर अपनी छाती गला और शिर को यथा साध्य एक सिधाई में रक्खो कंधे जरा पीछे को दबे हों और हाथ जाघों पर आसानी से पड़े हों। इस स्थिति में शरीर का अधिकांश बोझ पसलियों पर रहता है और इस आसन में मनुष्य देर तक बैठ सकता है। योगी को यह बात साबित हो गई है कि ताल युक्त श्वास का सर्वोत्तम फल नहीं मिल सकता यदि मनुष्य छाती खलाकर और पेट निकालकर आसन लगावेगा (२) श्वास धीरे-धीरे भीतर खींचते हुए मात्रा हृदय की गति को गिन जाओ। (३) तीन मात्रा तक गिन कर रोक रक्खो। (४) छ मात्रा तक गिनते हुये श्वास धीरे धीरे बाहर निकालो। (५) श्वासों के बीच में ३ मात्रा तक बिना श्वास के रहो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(६) बार बार ऐसा ही करते रहो, पर प्रारम्भ ही में अपने को थका मत डालो। (७) जब अभ्यास को समाप्त करना चाहो तो सफाई करने वाली श्वास क्रिया कर डालो। जिससे तुम्हें आराम मिल जायगा और फेफड़े साफ हो जायेंगे।

थोड़े ही अभ्यास के पश्चात् तुम श्वास खींचने और श्वास छोड़ने के काल की १५ मात्रा तक बढ़ा सकते हो। इस बढ़ाव में स्मरण रहे कि श्वास रोकने और बिना श्वास रहने की मात्राएँ, श्वास खींच हैं। और श्वास छोड़ने की मात्राओं की आधी हुआ करती हैं।

श्वास की मात्राओं के बढ़ाने के प्रयत्न में अति मत करो; परन्तु ताल से प्राप्त करने में जहाँ तक हो सके पूरा प्रयत्न करो, क्योंकि श्वास के लम्बान की अपेक्षा यह अधिक प्रधान बात है। तब तक यत्न में लगे रहो जब तक तुम्हें सारे शरीर में व्याप्त कम्प की गति के ताल का अनुभव स्वयं न होने लगे। इसमें थोड़े अभ्यास और धैर्य्य की आवश्यकता होगी परन्तु उन्नति करने में जो आनन्द का अनुभव तुम्हें होगा वह इस कार्य्य को आसान बना देगा। योगी बहुत ही सन्तोषी और धैर्य्यवान् मनुष्य होता है और इन्हीं गुणों से बड़ी बातें प्राप्त कर लेता है।

मनः संयुक्त श्वास।

अभ्यासी को खूब याद रखना चाहिये कि पुष्ट मन को धारण करने के लिये पुष्ट शरीर भी चाहिये, क्योंकि शरीर ही जीवात्मा का मन्दिर है, यही वह लैम्प है जिसमें आत्मा का प्रकाश दीप्त हो रहा है। सब बातें अपने स्थान पर अच्छी होती हैं और सब बातों के लिये स्थान भी है। सम्पुष्ट मनुष्य पक्का मनुष्य है, वह शरीर, मन और आत्मा तीनों के महत्व को समझता है और तीनों को उनका ऋण चुकाता है। किसी एक को भुलवा देना अपराध

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है इस अपराध का देर सवेर प्रायश्चित करना ही पड़ेगा। वह एक ऐसा ऋण है कि उसे ब्याज के साथ चुकाना ही पड़ेगा। योगी की कुल मानसिक श्वास क्रिया का आधार ताल युक्त श्वास है। जब मन ताल और उसके काल की अवधि को ग्रहण कर लेगा। तब मन को इच्छा की प्रेरणा से अपनी कम्पायमान धाराओं को यथेष्ट स्थान पर भेजने के लिये साफ छुटकारा हो जावेगा।

मानसिक श्वांसके द्वारा मन की बातों का भेजना

यदि कोई किसी के सच्चे प्रेम और सच्ची सहानुभूति की इच्छा रखता हो तो जिसके साथ वह स्वयं भी सच्चा प्रेम और सच्ची सहानुभूति रखता हो तो उसके पास ऐसा विचार भेज सकता है, और उसका प्रयोग सफल भी हो सकता है, परन्तु उसी दशा में जब भेजने वाले पूर्व कहे हुए अभ्यासी का उद्देश्य पवित्र और निष्कपट होगा। ऐसा ही मनुष्य अपने विचारों को प्राण की धारा के साथ दूसरों के मन तक पहुँचा कर उसके ध्यान और मन को आकर्षित कर सकता है। अन्तः करण में उसके विचार मारकोनी की वेतार को विद्युत की भाँति बीच की रुकावटों को पार करता हुआ उसी दुरस्थ मनुष्य के पास जा सकता है, जो उसका सच्चा प्रेमी और सच्ची सहानुभूति रखने वाला है। यदि दूर के मनुष्य पर अपने विचार को भेजना है तो पहले उस मनुष्य के रूप की मानसिक कल्पना कर लो तब उसके और तुम्हारे बीच में प्राण की धारा द्वारा लगाव हो जायगा। यह मानसिक प्रयोग है और प्रयोक्ता की मानसिक कल्पना शक्ति पर अवलम्बित है। जब तुम्हारे और उस मनुष्य के बीच में लगाव हो जायगा तो तुम उसका अनुभव भी कर सकते हो, क्योंकि वह मनुष्य निकटस्थ प्रतीत होने लगेगा। जब लगाव स्थिर हो जाय तो दुरस्थ प्रयोग से मन ही मन यों कहो कि "मैं तुम्हारे पास अमुक विचार भेजता हूँ इससे तुम्हें हमारे विचार मिलेंगे उसे तुम

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रहण करो।" तब जिन विचारों को भेजना चाहते हो उन्हें अपने प्राण की कल्पना में ले आवो, और ताल युक्त श्वांस के प्रत्येक निःश्वास के साथ उन विचारों को परिणत करो। यह आवश्यक नहीं है कि इस क्रिया के लिये तुम कोई समय निश्चित कर लो, पर यदि तुम चाहो तो ऐसा भी कर सकते हो। इससे तुमसे विचार धारा पाने की अभिलाषा उसके द्वार को तुम्हारे मानसिक विचार को ग्रहण करने के लिये खोले रहेगी और जब कभी तुम अपनी धारा उसके पास भेजोगे वह ग्रहण कर लेगा यदि कोई समय निश्चित कर लो तो उस समय दूरस्थ मनुष्य को अपने शरीर को ढीला कर देना चाहिये और धाराओं को ग्रहण करने को उसे प्रबल आकांक्षा रखनी चाहिये। इसी विधि से दूरस्थ रोग निवारण के लिये भी उपाय करने से रोगी के रोग को दूर किया जा सकता है। तुम थोड़े ही अभ्यास से इसका वैसी ही खूबी से कर सकते हो, जैसी खूबी से विख्यात करने वाले करके फलीभूत हुआ करते हैं।

दूसरों के मलिन विचारों और नीच प्रभावों से बचने का उपाय

[कवच रचना]

यदि कभी तुम नीच मानस के मनुष्यों की संगति में पड़ जाते हो तब तुन्हें उनके विचारों का उद्वेजक प्रभाव प्रतीत होने लगता है, ऐसी दशा में चन्दताल युक्त श्वांस लो जिससे तुम्हारे पास प्राण अधिक हो जाय, और तव मानसिक कल्पना द्वारा अपने चारों आर विचार का अण्डाकार घेरा डाल दो, यही कवच बन जायगा, और दूसरों के मलिन विचारों और नीच प्रभावों से तुम्हें सुरक्षित रक्खेगा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानसिक अभीष्टगुण को प्राप्त और पुष्ट करने की विधि:—

शान्त चित्त होकर पड़ जाओ या सीधे बैठ जाओ। जिस गुण को तुम प्राप्त किया चाहते हो उसकी मानसिक कल्पना करो—मानो तुम उस गुण से युक्त हो, और दृढ़ इच्छा की प्रेरणा करो कि वह गुण पुष्ट होकर तुम में बना रहे, इस कल्पना को धारण किये हुए ताल युक्त श्वास लो। यथा: साध्य उस मानसिक कल्पना को सर्वदा धारण किये रहो और जब ऐसा वर्त्ताव आरम्भ करो कि मानो तुम उस अभीष्ठ गुण से युक्त हो तो अपनी भावना के अनुसार तुम उस गुण से उन्नति करते हुए पाये जाओगे। श्वास का ताल मन के नये संयोगों के जुटने में सहायता देता है।

मानसिक वृत्तियों पर अधिकार करने की क्रिया।

अनिष्ट वृत्तियां जैसे भय, शोक, चिन्ता, घृणा, क्रोध, द्वेष, ईर्षा इत्यादि भी अपनी इच्छा के वश में लाई जा सकती हैं, और इच्छा यदि ताल युक्त श्वास के साथ प्रेरित की जाये तो उसका प्रभाव और भी अधिक और सरलता से पड़ेगा। ज्यों ही तुम निःश्वास छोड़ने लगो त्यों ही मानसिक आज्ञा दो और कल्पना करो कि निःश्वास के साथ ही साथ अनिष्ठ वृत्तियां बाहर फेंकी जा रही हैं। सात बार ऐसा करो सफाई वाली श्वांस लेकर समाप्त कर दो, तब देखो कि तुम्हें कैसा अच्छा मालूम होता है। मानसिक आज्ञा दृढ़ता पूर्वक देनी चाहिये।

योगी की मानसिक महाश्वास।

"धन्य वह योगी है जो अपनी हड्डियों द्वारा श्वाँस ले सकता है।" निम्न अभ्यास से सारा शरीर प्राण से परिपूर्ण

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो जायगा और साधक जब इस अभ्यास से निकलेगा तो उसकी प्रत्येक हड्डी, पट्ठा, तन्तु, परमाणु अवयव और भाग प्राण और ताल से नहाये हुए होंगे। यह शरीर की सब से बड़ी सफाई है अभ्यासी को ऐसा मालूम होगा कि उसका शरीर फिर नया हो गया, सिर से पैर तक मानों नया गढ़ गया। अभ्यास यों है:—

(१) बिलकुल ढीले ढाले होकर पूरे सुख से पड़ जाओ। (२) तब तक तालयुक्त श्वांस लो जब तक ताल ठीक न हो जाये। (३) तब श्वांस लेने और छोड़ने के समय यह कल्पना करो कि श्वांस टांगो के मार्ग आ रही है और उसी मार्ग से जा रही है, फिर भुजाओं की हड्डियों के मार्ग से, फिर खोपड़ी के सिर से, फिर आमाशय से, फिर मानों मेरु दण्ड में नीचे से ऊपर और ऊपर से नीचे जा रही है, मानो सारा शरीर प्राण और जीवन से भर गया है। (४) तब [तालयुक्त श्वांस लेतें हुए] प्राण की धारा सातों मार्मिक स्थानों में अर्थात् १ ललाट २ सिर के पिछले भाग में, ३ मस्तिष्क के आधार में, ४ सौर्य केन्द्र में ५ मेरु दण्ढ के नीच ले भाग में, ६ नाभी में ७ जननेन्द्रिय स्थानों में बारी-बारी से भेजकर समाप्त कर दो और अन्त में साफ करने वाली क्रिया कर डालो।

आत्म ज्ञान विधि

अपने शरीर को ढीली ढाली गिरी हुई दशा में रक्खो। तालयुक्त श्वांस लो और असली आत्मा का ध्यान धरो अपने को यह सोचो कि तुम शरीर से पृथक एक अस्तीत्व हो यद्यपि तुम इसे पहने हो और इच्छा पूर्वक इसे उतार देने में समर्थ हो। अपने को शरीर नहीं, किन्तु, आत्मा का ख्याल करो और शरीर को आवरण समझो जो कि लाभदायक और सुखदायक तो है पर तुम्हारा खास कोई अंग नहीं है। तुम अपने को एक स्वतन्त्र सत्ता समझो और शरीर को केवल अपने काम के लिए

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपयोग में ला रहे हो। ध्यान करते समय शरीर को पूर्णतया भुला दो तुम्हें मालूम होगा कि कभी कभी तुम शरीर से बिलकुल बेखबर हो गये हो, और यह जान पड़ेगा कि तुम शरीर से, बाहर हो और अभ्यास कर चुकने के बाद उसमें लौटोगे। ऐसी अवस्था में आत्मा का बोध हो जाने के पश्चात् वही आत्मा ज्योतिर्मय परमात्मा का अनुभव कर कैवल्य पाने का अधिकारी होता है। कैवल्यप्राप्ति का साधन योग मंडल गुरुकुल काशी द्वारा प्रकाशित आत्मयोग पु० ३ में यथा साध्य उत्तम रीति से वर्णन किया गया है। अब स्वासोच्छ्वासरहस्य 'श्वांस विज्ञान' के महत्व को बताने के उपरान्त प्राण की महिमा जो वेद तथा उपनिषदों में कथन किया गया है वर्णन करता हूँ।

प्राण महिमा।

१ प्राणोवावज्येष्ठश्चश्रेष्ठश्च ॥छां० ५।१।१।बृ० ६।१।१

अर्थात् "प्राण ही सबसे मुख्य और श्रेष्ठ है।"

२ प्राणोवैबलंतत्प्राणेप्रतिष्ठितम् ॥ बृ० ५।१४।४

"प्राण ही बल है, वह बल प्राण में रहता है।"

३ प्राणोवाअमृतम् बृ० १।६।२

"प्राण ही अमृत है।"

४ आयुर्नप्राणः ॥ ऋ० १।६६।१

"प्राण ही आयु है।"

५ प्राणंमेपाह्यपानंमेपाहिव्यानंमेपाहि यजु० १४।८।१७

"मेरे प्राण, अपान, व्यान, का संरक्षण करो।" इसका संरक्षण करने से ही ये प्राण सब शरीर का संरक्षण करते हैं।

६ प्राणंनवीर्यंनसि ॥ यजु० २१।४६

"नाक में प्राण शक्ति और वीर्य बढ़ाओ।" प्राण शक्ति नासिका के साथ सम्बन्ध रखती है और जब यह प्राण शक्ति

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बलवान होती है, तब वीर्य भी बढ़ता है और स्थिर होता है। वीर्य और प्राण ये दोनों शक्तियाँ साथ साथ रहती हैं।

७ राजा मे प्राणः ॥ यजु० २०।५ = "मेरा प्राण राजा है।" इस शरीर में प्राण नामक राजा अतिथि आया है और उसके अनुचर अन्य इन्द्रिय गण हैं। इसलिये प्राण की सेवा शुश्रूषा अधिक करना चाहिये, क्योंकि यदि राजा असन्तुष्ट होकर चले गये तो एक भी अनुचर आपकी सहायता नहीं कर सकेगा अतः प्राण शक्ति को स्वाधीन रखने के लिये प्राणायाम का अभ्यास नित्य करना चाहिये।

प्राणायाम से लाभ

प्राणायाम जैसे मन के निरोध में सहायक है, वैसे शरीर स्थिति के लिये बड़ा उपयोगी है अर्थात् शरीर के रोगादि हटाने में बड़ा काम देता है, इसी वास्ते स्मृतिकारों ने लिखा है कि "प्राणायामैर्दहेद्दोषान्" प्राणायामों से बात पित्त, कफ जन्य दोषों को हटावे, यह सब को प्रकट ही है कि जीवन के अर्थ वायु, जल और अन्न इन तीन पदार्थों की आवश्यकता है सब से पहले वायु तत्पश्चात् जल तत्पश्चात् अन्न की आवश्यकता है। अतएव वायु सेवन करना आवश्यक है। चिकित्सा शास्त्र बतलाता है कि विशेषता से वायु सेवन ही शरीर का आधार और उसकी पुष्टी का हेतु है, व्यायामादि भी इसी पर निर्भर है, प्राणोन्नति की नियमानुसार वृद्धि के लिए व्यायाम किया जाता है—बाल्यावस्था से ही प्राणायाम का अभ्यासी होना बालकों को अतीव नीरोग और हृष्ट पुष्ट बनाता है, और भली भाँति उनके अङ्गों की वृद्धि करता है, उदर स्थूल नहीं होता अर्थात् पेट बड़ा और विरूप नहीं होता है, छाती विशाल होती है, और ग्रीवा स्थूल और दृढ़ हो जाती है, नेत्र विशाल हो जाते हैं, कपोल बैठने नहीं पाते, चेहरा भरा रहता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) प्राणायाम के द्वारा जितनी वायु हम भीतर ले जाते हैं, वह आठ या नौ या अधिक सेकन्ड तक (जैसा अभ्यास) हो भीतर रुकी रहती है उसको जठराग्नि इतना उष्ण (गरम) कर देती है—कि वह वायु अच्छी रह फैल जाती है कारण कि ठंडे पन से मल नहीं छूटता है जिस प्रकार उष्ण जल से हस्त, पाद आदि खूब साफ हो जाते हैं उसी प्रकार उष्ण हुआ वायु जो समस्त नाड़ियों को फुला कर उष्ण कर देती है। इस दशा में नाड़ियों के अन्दर का मल खूब स्वच्छ हो जाता है। पीछे हम बलपूर्वक उस अन्दर की वायु को बाहर निकालते हैं और उस समय भी बाहर की वायु को भीतर नहीं जाने देते, इस साधन से जो मल वायु ने छुटाया था, बाहर निकल जाता है–और शुद्ध प्राणप्रद वायु 'आक्सीजन' रुधिर में संयुक्त होकर रह गया था।

[क्योंकि प्राणप्रद वायु रक्त में मिलता है, प्राणनाशक वायु 'नाइट्रोजन' नहीं मिलता]

वह भली भाँति शरीर का भाग होता है, इसका सबूत यह है कि इस दशा में शरीर अत्युष्ण होने लगता है. उष्णता से चित्त व्याकुल होता है। शीघ्रता से वायु को पुनः ग्रहण करना चाहता है, छिद्रों का मुख खोल देती है तलव (पादतल) से लेकर चोटी तक उष्णता भरीसी प्रतीत होती है—कितना ही अधिक शीत क्यों न पड़ रहा हो—बरफ क्यों न गिर रहा हो दो चार सेकन्ड का ही अभ्यास हो जाने से शरीर को पसीना आ जाता है बहुत से कसरती पसीना लाने के अर्थ मुगदर हिलाते हैं, क्रिकिट, फुटवाल आदि और कई प्रकार की दौड़ धूप तथा बल करते हैं और इन सब में किसी न किसी प्रकार की चोट आदि लग जाने का भय रहता है, प्राणायाम करने वाला इन अनेक व्याधियों से बचा रहता है। इसके अतिरिक्त ऊपर लिखित वस्तुओं को द्रव्यवान् पुरुष ही प्राप्त कर सकते हैं सर्वसाधारण नहीं कर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकते—प्राणायाम में प्रथम तो एक कौड़ी व्यय नहीं होती, द्वितीय समय जो अमूल्य है वह बहुत बच जाता है और लाभ अनेक प्रकार के प्राप्त होते हैं, और द्रव्यवान्, द्रव्यहीन, बली, निर्बल, अप्रतिष्ठित, राजा, रंक जहाँ चाहें इस साधन को करके अमूल्य लाभ उठा सकते हैं। कहा भी है कि—

यावद्वायुःस्थितोदेहेतावज्जीवंनमुंचति ।
मरणांतस्यनिष्क्रान्तिस्ततोवायुंनिरोधयेत् ॥

अर्थात् जब लो वायु शरीर में स्थिर रहती है, तब लो जीव शरीर को नहीं छोड़ता, जब प्राण वायु शरीर से निकल जाती है, तो उसी अवस्था को मरण कहते हैं, जीवन मरण प्राण वायु के आधीन है, इसलिए प्राण वायु का अवरोध अवश्य करना चाहिए।

इससे विदित हुआ कि प्राणायाम भी एक ऐसा व्यायाम (साधन) है जिससे कि रक्त उत्तम और शुद्ध रह सकता है, रक्त शोधनार्थ औषध (जुलावादि) के सेवन से बच सकते हैं, रुधिर के स्वच्छ निर्मल और शुद्ध होने से खुजली, सूजन, सुर्खी तथा दाह नहीं होता है, मस्तक पीड़ा, न्यूनदृष्टि धातुक्षीणता, पक्षाघात (लकवा), तृष्णा, हिचकी, श्वास, खाँसी, पाण्डु-रोगादि नहीं होते हैं।

(३) जठराग्नि की वृद्धि—यह तो स्पष्ट है कि वायु से अग्नि प्रज्वलित होती है, श्वास के साथ प्राणप्रद वायु रक्त और नाड़ियों में युक्त हो जाता है। वही वायु जठराग्नि-अन्दर की उष्णता को दहका कर प्रचण्ड और तेज कर देता है अन्तरात्मा को इतना पुष्ट कर देता है कि प्राणायाम करने वाले को कदापि अजीर्ण नहीं होता है, शाक पात या कठोर से कठोर पदार्थ भक्षण करें तत्काल पचा देता है। पाचन शक्ति को यथाक्रम रखने के लिये उनको सोडावाटर, लेमोनेड, चूरन, चटनी, पुड़िया गोली आदि की कदापि आवश्यकता नहीं होती, यदि आपको

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अजीर्ण रहता हो या पाचन शक्ति का यथाक्रम रखना अभीष्ठ हो या क्षुधा की त्रुटि हो, या भोजन विलम्ब से पचता हो तो आज ही आप प्राणायाम करके परीक्षा कर लीजिये कि आपको कितना लाभ होता है।

(४) यदि आपको बहुत दिनों से अजीर्ण रहता हो तो न्यून से न्यून २१ दिवस नियमानुसार प्राणायाम करने से निःसन्देह आपको लाभ होगा।

प्राणायाम में यह एक अद्‌भुत बल है, सब को विदित है कि बवासीर का रोग प्रायः असाध्य होता है, नियमानुसार प्राणायाम करने से यह रोग इस प्रकार दूर हो जाता है जैसे सूर्य के सन्मुख अन्धकार।

(५) श्वास क्रिया अर्थात् प्राणायाम से फेफड़ा बढ़ता और पुष्ट होता है। क्षय रोग लेशमात्र नहीं रहता, श्वास रोग की जड़ उखड़ जाती है। खांसी दूर हो जाती है। विकृत कफ भस्म हो जाता है, दम शीघ्रता से नहीं फूलता, बल अधिक बढ़ता है और बल बढ़ाने का साक्षात् यह प्रमाण है कि श्वास नहीं फूलता, और जब तक श्वास नहीं फूलता थकावट कम रहती है और जिसको थकावट शीघ्र न हो वही बलवान् होता है, अतः प्राणायाम से बल अधिक बढ़ता है।

(६) जल या पारे को जबतक वायु लगती रहती है वह बराबर चञ्चल रहते हैं जब वायु बन्द हो जाती है, उसकी चञ्चलता भी बन्द हो जाती है, इसी प्रकार जब प्राणायाम द्वारा वायु का अन्दर, बाहर से आना जाना रोक दिया जाता है तो चित्त में स्थिरता होने लगती है, और स्थिरता से विचार-शक्ति, बुद्धि और पराक्रम शक्ति की वृद्धि होती है, स्मरणशक्ति ऐसी प्रबल हो जाती है कि जो सहस्रों रुपयों के व्यय करने से भी होनी असम्भव है। प्राणायाम साधन से यही नहीं कि विचार शक्ति आदि की वृद्धि युवावस्था में ही रहती है, किन्तु इसका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साधन करते रहने से वही अवस्था वृद्धावस्था तक रहती है।

(७) अनुभव से सिद्ध हुआ है कि जितने काल तक प्राणायाम किया जावें उतने काल तक का वायु पुष्टिकारक पदार्थों का लाभ देता है यानी उतनी देर तक क्षुधा नही लगती है, यदि आप अनुभव करना चाहते हैं तो क्षुधायुक्तावस्था (भूख) में प्राणायाम साधन कर परीक्षा कर सकते हैं।

(८) चिकित्सा शास्त्रां से सिद्ध हुआ है कि मनुष्य के शरीर में मुख्य धातु वात, पित्त, कफ तीन हैं, जिनमें से पवन स्वयं चलकर शेष भागों को भी गति दिया करती है, वात कोप से इसी प्रकार के रोगादि उत्पन्न होते हैं जैसे—अन्डवृद्धि हिचकी, श्वास, कंठ से ऊपर के रोग, अतिसार, मंदाग्नि सब शरीर में समान रहने वाले रोग मूत्राशय और गुदा के रोग, पसली पीड़ा, नाभि-शूल, इत्यादि रोग प्राणायाम साधन से इन सब की रुकावट होती हे।

(९) यह भी विदित हो कि रसायन विद्या में उष्णता मुख्य वस्तु विशेषतया संयुक्त पदार्थों को विभक्त करना उष्णता का प्रधान गुण है। उष्णता का गुण है कि धातुओं के आन्तरिक मल तपाने से छूट जाते हैं, यदि कोई रंग किसी धातु आदि के अन्तर में युक्त हो जावे तो रसायनवेत्ता उसको उष्णता से पृथक् कर देते हैं। इसी प्रकार प्राणायाम साधन से आत्मा की शुद्धि हो जाती है, मन में शुद्धता और निर्मलता होती है, और हृदय में एक प्रकार का प्रकाश ज्ञान उत्पन्न होता है, प्राणायाम साधन से दर्पण समान निर्मलता आत्मा को प्राप्त होती है जो किसी अन्य प्रकार से प्राप्त होनी संभव नहीं है। मनु भगवान् का कथन है कि:—

"दह्यन्तेध्यायमानानांधातूनांचयथामलाः।
तथेन्द्रियाणांदह्यन्तेदोषाःप्राणस्यनिग्रहात्।"
मनु० ॥अ० ६।७१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थ—जैसे अग्नि में तपाने से सुवर्ण आदि धातुओं का मल नष्ट होकर शुद्ध होते हैं, वैसे प्राणायाम करके मन आदि इन्द्रियों के दोष क्षीण होकर निर्मल हो जाते हैं।

(१०) विदित हो कि मनुष्य के शरीर में जो वायु रहता है वह प्राण, उदान, समान, व्यान और अपान इन पाँच भागों में वैद्यक शास्त्रों में विभक्त किया हुआ है, आयुर्वेद प्रवर्त्तक श्री ऋषिराज धन्वन्तरि जी महाराज जिनके उपदेश से सर्व भूगोल में चिकित्सा शास्त्र प्रकाशित हुआ है, अपने निदान स्थान के प्रथमाध्याय में वर्णन करते हैं, कि वीर्य्य दोष और प्रमेह [illegible] वात "व्यान और अपान" के कोप से उत्पन्न होते हैं। प्रमेह २० प्रकार का है उनमें १६ प्रकार का कफादि से जो उत्पन्न होता है वे चिकित्सा के योग्य है, परन्तु चार प्रकार के जो कि वात (वायु) से उत्पन्न होते हैं वे असाध्य हैं। प्राणायाम साधन से व्यान और अपान वायु का कोप नहीं होता है। अतएव प्रमेहादि रोगों की निवृत्ति भलीभाँति होती है क्योंकि वीर्य्य और वायु का परस्पर एक मुख्य सम्बन्ध है। इसी कारण प्राणायाम से वीर्य शुद्ध स्तब्ध हो जाता है, क्षीणता और प्रमेह रोग दूर होता है, यदि कोई महाशय प्राणायाम साधन करने पर भी कदाचित् वीर्य्य रोग से रहित न हों तो समझना चाहिये कि आहार व्यवहार में असावधानी अवश्य करते होंगे। क्योंकि प्राणायाम साधन का परिणाम निरर्थक नहीं जाता।

(११) 'प्राणायाम से बल की वृद्धि'—प्राणायाम से सब शरीर का बल बढ़ता है और मन को शक्ति की उन्नति होती है। परमात्मा की जीवन अर्थात् प्राणशक्ति सूर्य्य के द्वारा सब वायु में फैलती है, उस प्राण शक्ति से संयुक्त हुआ वायु प्राणायाम द्वारा शरीर में जाता है वहाँ रुधिर के साथ सम्बन्ध में आकर अपनी जीवन शक्ति को रुधिर में स्थापित करता है और पश्चात्

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाहर आता है। यही प्राणायाम के पूरक, कुम्भक और रेचक हैं। यह जीवन शक्ति सब शरीर का आरोग्य स्थिर रखने में पूर्ण-तथा समर्थ है क्योंकि यह परमात्मा--शक्ति होने से कोई दवा इसके बराबर उत्साह नहीं दे सकती। सूर्योदय के समय, मध्यान्ह के समय तथा सूर्यास्त के समय प्राणायाम करने से मन का उत्साह इतना बढ़ता है, कि उसके बराबर कोई उत्साह वर्धक औषध नहीं है। प्रति बार सौ पचास प्राणायाम अच्छी प्रकार करना उचित है।

शरीर में किसी स्थान पर बीमारी होने के समय, मन की प्रेरणा और प्रबल इच्छा शक्ति द्वारा इस प्राण शक्ति को उस रुग्ण स्थान पर पहुँचाने से बीमारी हट जाती है। इस प्रकार बिना औषध आरोग्य प्राप्त होने के लिये प्रबल इच्छा शक्ति होने से सफलता होती है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। मन की संशयित वृत्ति से व्याधि बढ़ती है।

प्राणायाम से प्राणों का संयम होता है, उस से मन और चित्त स्वाधीन होता है, और मन के स्वाधीन होने से सब इन्द्रियों और अवयवों को स्वाधीन किया जाता है। यही इन्द्रिय संयम है कि जो प्राणायाम से सिद्ध हो सकता है। अपने हर एक इन्द्रिय की परीक्षा करके उसके दोष दूर करने और उसमें शुभ गुण स्थापित करने के लिए सदा प्रयत्न शील होना चाहिए। प्रणायाम की विस्तृत विधि "प्राणायाम विधि" में प्रकाशित कर दी गई है। इस पुस्तक में केवल रोग निवारणार्थ सम्बन्धी प्राणायाम विधि अब वर्णन करता हूँ।

प्राणायाम विधि।

प्राण ही महा शक्ति है, प्राण ही जगत् रक्षक है, प्राण के जय करने से सब कुछ जय हो सकता है। स्थूल और सूक्ष्म भेद से प्राण के दो भेद हैं। प्राण जय करने वाली क्रिया को

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राणायाम कहते हैं। हठयोग में वायु प्रधान है और लय योग में सूक्ष्म क्रिया का साधन होता है वह मनःप्रधान है। वायु प्रधान प्राणाणाम क्रिया सर्व हितकर है। प्राणायाम साधन करने के लिये चार बातों की आवश्यकता है, प्रथम उपयुक्त स्थान, द्वितीय नियमित समय, तृतीय मिताहार का अभ्यास और चतुर्थ नाड़ी शुद्धि। जैसा कि "प्राणायाम विधि" नामक पुस्तक में आसन विधि और आसन चिकित्सा के प्रकरण पश्चात् प्रकाशित कर दिया गया है पाठकगण वहाँ ही देख लेवेंगे।

प्राणायाम में तीन भाग होते हैं। पूरक, कुम्भक, रेचक नासिका द्वारा प्राण को अन्दर लेने का नाम पूरक है। उसको अन्दर रखने का नाम कुम्भक और पश्चात् नाक के द्वारा वाहिर छोड़ने का नाम रेचक होता है। कई विशेष प्राणायामों में पूरक और रेचक मुख के द्वारा भी होते हैं परन्तु सर्व साधारण प्राणायामों में नासिका का ही उपयोग करना योग्य है। पूर्वोक्त तीन भागों से जो प्राणायाम बनता है उसके क्रम भेद से कई प्रकार के प्राणायाम सिद्ध होते हैं।

१—पहिला "केवल कुम्भक" है रेचक पूरक न करते श्वासोच्छ्वास की गति का निरोध करना केवल कुम्भक कहलाता है।

२—दूसरा "मध्य कुम्भक" है। पूरक करने के पश्चात् यथाशक्ति कुम्भक करके तदनन्तर रेचक करने से यह प्राणायाम सिद्ध होता है।

३—तीसरा "अन्त्य कुम्भक" है। पूरक करने के पश्चात् रेचक करना और अनन्तर बाहर ही प्राण को स्थिर करने का नाम अन्त्य कुम्भक होता है। इसी को वाह्य कुम्भक कहते हैं।

४—चौथा "अकुम्भक" है। इसमें केवल पूरक और रेचक ही होते हैं, कुम्भक नहीं होता है।

इनमें "केवल कुम्भक" सबसे श्रेष्ठ है, उसकी सहायता के

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिये अन्य प्राणायाम हैं। दीर्घकाल पर्यन्त केवल-कुम्भक प्राणायाम सिद्ध होने से बड़े लाभ होते हैं। स्थान और काल के भेद से प्राणायास में अनेक भेद होते हैं। काल का भेद यही है कि, पूरक—कुम्भक—रेचक में समय की न्यूनता अथवा अधिकता होना। स्थान का भेद यह है कि अपने अभीष्ठ अवयव में प्राण ले जाने की शक्ति प्राप्त करके वहां प्राण से इष्ट कार्य करने की इच्छा शक्ति बढ़ाना।, इसको "दैशिक प्राणायाम करते" हैं।

प्राणायाम के अभ्यास से प्रकाश के आवरण नाश होते हैं। अर्थात् तनका तेज फैलने लगता है, ध्यान धारण करने की योग्यता मन में बढ़ जाती है। तात्पर्य प्राणायाम से जिस प्रकार शारीरिक आरोग्य बढ़ता है, इन्द्रियों की शक्ति विकसित होती हैं, उसी प्रकार मन का बल वृद्धिगत हो जाता है।

प्राणायाम ठीक प्रकार होने के लिये तीन बंध करने आवश्यक हैं। मूल बंध, उड्डियान बंध और जालंधर बंध।

(१) मूलबंध—पूरक करने के समय करना चाहिये। गुदा और शिस्न के बीच में जो चार अंगुल का स्थान है। उस स्थान में एडी का दबाव रख कर गुदा का आकुंचन करके अपान वायु को ऊपर खींचने से मूलबंध सिद्ध होता है। इससे अपान का प्राण से संयोग होता है, मलमूत्र अल्प होता है। और वीर्य का रक्षण होता है। इसलिये इसका योग्य अभ्यास करने वाला पुरुष वृद्धा अवस्था में भी तरुण दिखाई देता है।

(२) उड्डीयान बंध—यह बंध रेचक के समय होता है। सम्पूर्ण पेट को अन्दर खींचना और उसको जहाँ तक हो सके वहाँ तक पीठ की तर्फ ले जाने से यह बंध सिद्ध हो । है। यह सुगम है तथा बड़ा लाभदायी है। क्षुधा प्रदीप्त होने से यह मृत्यु को दूर करने वाला है।

(३) जालंधर बंध—कंठ को सिकोड़ कर हनु (ठोडी)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को कंठ मूल में दबाय के ऊपर लगाने से यह बंध सिद्ध होता है। इसी को कंठ बंध भी कहते हैं। इसका छः मास तक योग्य रीति से अनुष्ठान करने से सिद्धि प्राप्त होती है।

पूरक के समय मूल बंध करने से अपान की ऊर्ध्वगति होती है। कुम्भक के समय जालंधर बन्ध करने से प्राण की निम्न गति होती है। इस प्रकार अपान और प्राण का मध्य में संयोग होकर उष्णता बढ़ती है जठराग्नि प्रदीप्त होती है। इस उष्णता के बढ़ जाने से कुन्डलिनी की जागृति होती है। वह शक्ति जागृत होने के पश्चात् सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा ऊपर चढ़ने लगती और सहस्रार चक्र में पहुँच कर शिव के साथ संयुक्त होती है। यही स्वानन्द साम्राज्य है। प्राणायाम के दृढ़ अभ्यास से इस की सिद्धि होती है।

एक नासिका से पूरक करने पर दूसरी नासिका से रेचक करना चाहिये। पश्चात् जिससे रेचक किया होगा उसी से पूरक करके पहिली से रेचक करना योग्य है। इसी प्रकार दायी और बाईं नासिका से यथाक्रम श्वासोच्छ्वास करने का अभ्यास बढ़ाने से शनैः शनैः योग्य प्राणायाम होने लगता है। पूरक को जितना समय लगता है उससे चार गुणा कुम्भक और दो गुणा रेचक करना चाहिये। अर्थात छः निमेष में पूरक हुआ होगा, तो चौबीस निमेष कुम्भक के लिये और बारह निमेष रेचक के लिये समय लेना चाहिये। अपनी शक्ति के अनुसार ही यह समय न्युनाधिक रखना चाहिये। शक्ति से अधिक करने से बड़ी हानि है। इसमें यह सावधानी रखनी चाहिये कि पूरक कुम्भक तथा रेचक में किसी समय धक्का न लगे, सरल गति से ही प्राण का आना और जाना होता रहे। शक्ति से अधिक करने से धक्के उत्पन्न होते हैं। उनसे शक्ति की क्षीणता होती है।

जिस प्रकार शुद्ध जल के स्नान से शरीर का वाह्य भाग निर्मल होता है उसी प्रकार योग्य प्राणायाम से अन्दर की

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्मलता होती है। पूर्वोक्त रीति से अपान और प्राण का संयोग करके अभ्यास से जठराग्नि प्रदीप्त होता है और अपचन का कोई दोष नहीं होता। अग्नि प्रदीप्त होता है, परन्तु ध्यान में रहे कि अधिक प्रमाण में भोजन करने से हानी ही होगी, इसलिये मिताहार से ही योग सफल होता है, यह बात कभी भूलना नहीं चाहिये। प्राणायाम से इन्द्रियाँ निर्दोष होती हैं और अपना अपना कार्य करने में अधिक समर्थ होती हैं। शरीर में जो भारीपन उत्पन्न होता है वह प्राणायाम के अभ्यास से दूर होता है। भारीपन बीमारी का लक्षण और हलकापन आरोग्य का लक्षण है। बैठ कर कार्य करने वाले के पेट बड़े होते हैं। पेट बड़ा होना मृत्यु को पास बुलाना ही है। प्राणायाम के अभ्यास से पेट ठीक हो जाता है, अतएव उत्तम आरोग्य प्राप्त हो जाता है। इस प्राणायाम से अनेक लाभ हैं।

अन्य सम्पूर्ण शक्तियों में प्राण की शक्ति सब से श्रेष्ठ है। जब यह प्राण शक्ति स्वाधीन होगी तब उसके स्वाधीन होने से अन्य शक्तियाँ इसका सहज में प्राप्त हो सकती हैं यही प्राणायाम के पूर्णत्व की कल्पना है। मुख्य शक्ति को स्वाधीन रखने का यही यत्न है। इसलिये सावधानी से अभ्यास होना चाहिये। क्योंकि अयोग्य रीति से प्राण के साथ बर्ताव करने से बड़े कष्ट हो सकते हैं।

प्राण का निरोध करने से आप का मन आपके आधीन होगा। जिस प्रकार दूध में जल मिला होता है, उसी प्रकार प्राण और मन एक दूसरे के साथ मिले हुए हैं। इसलिये प्राण की स्वाधीनता होने से मन भी स्वाधीन होता है। मन स्वाधीन होने से इन्द्रियों समेत शरीर स्वाधीन होता है। इन्द्रियों की स्वैर (स्वच्छन्द) प्रवृत्ति दूर हो जाती है। आपका मन जिस तत्व का बना है उसी तत्व का सब लोगों का मन बना है, इसलिये जब आपका मन स्वाधीन होता है तब वही शक्ति बढ़ने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से अन्यों के मनों को वश करने को और उसके द्वारा उनके शरीर वश करने की शक्ति प्राप्त होती है। इस प्रकार की शक्ति जिनको प्राप्त है, उनको बहुत लोग अनुकूल होते हैं और इच्छा शक्ति के चमत्कार करते हैं इस प्रकार अनुभव होने से मन की अगाध शक्ति का पता लगता है तथा मन की अखंड उन्नति का भी मार्ग विदित होता है। इस प्रकार प्राणायाम के अभ्यास से अनेक लाभ होते हैं। हठयोग में रोग निवारणार्थ प्राणायाम के आठ भेद हैं यथा—

(१) सूर्य्य भेदी (२) उज्जायी (३) शीतकारी (४) शीतली (५) भस्त्रिका (६) भ्रामरी (७) मूर्च्छा (८) प्लाविनी।

सूर्य्यभेदी प्राणायाम

सबसे पहले जालंधर बंध का अनुष्ठान करके दक्षिण नासिका द्वारा वायु पूरक करके यथाशक्ति कुम्भक करके मूल देश से समान वायु उठाया जाय, तदनन्तर धैर्य्य पूर्वक वेग से वाम नासिका द्वारा रेचक करना चाहिये। इसी प्रकार पुनः पुनः करने से सूर्य्य भेदी कुम्भक हुआ करता है। यह क्रम नित्य रखना योग्य है। इससे जरा [बुढ़ापा] और अपमृत्यु भी टल जाते हैं, कुंडलिनी जागृत होती है, देहस्थ, अग्नि की वृद्धि होती है और शरीर में सूर्य्यवत् तेज उत्पन्न होता है।

उज्जायी प्राणायाम

बहिः स्थित वायु को नासिका द्वारा आकर्षण करके और अन्तःस्थ वायु को हृदय और गलदेश द्वारा आकर्षण करके मुख में कुम्भक द्वारा धारण किया जाय, तदनन्तर मुख प्रक्षालन पूर्वक जालंधर बंध का अनुष्ठान करके दक्षिण नासिका से रेचक करना, इसको उज्जायी कहते हैं इससे कफ दोष, क्रूर वायु, अजीर्ण, आमवात, क्षय, कास, ज्वर और प्लीहा इत्यादि रोगों का निवारण होता है और शरीर में उष्णता उत्पन्न होती है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शीतकारी प्राणायाम

ऊपर और नीचे के दोनों दांतों के बीच में जीभ रख के बाहर का वायु जोर से मुख में खींचना। वह ठंडा होता है। फिर कुम्भक करके दोनों नासिका से रेचक करना, इसको शीतकारी कहते हैं इससे अतुल रूप प्राप्त होता और शरीर में ठंडक होती है।

शीतली प्राणायाम

दोनों होठों के बाहर पखेरुओं की चोंच के जैसी जीभ निकाल के धीरे धीरे पूरक करके कुम्भक करना दोनों नासिका पुटों से रेचक करना, इसको शीतली प्राणायाम कहते हैं। इससे क्षुधा तृषा, तथा कामादि की शान्ति होती है। और गुल्म प्लीहा, ज्वर व पित्त इत्यादि का नाश होता है। यह सकल प्रकार श्वास रोग तथा हृद रोग की महौषधि और समाधि का सहायक है।

भस्त्रिका प्राणायाम

लुहारों के भस्त्रिका यंत्र द्वारा जिस प्रकार वायु आकृष्ट किया जाता है उस प्रकार नासिका द्वारा वायु समाकर्षण पूर्वक शनैः शनैः उदर में वायु भर कर ऊपर को परचालित करे। इस प्रकार से विंशतिवार वायु को परिचालित करके कुम्भक द्वारा वायु धारण करते हुए पुनः भस्त्रिका यंत्र द्वारा जिस प्रकार वायु निर्गत होता है उसी प्रकार नासिका द्वारा वायु निकाल देने से भस्त्रिका प्राणायाम हुआ करता है। यह कुम्भक यथा नियम से तीन बार आचरण करने के योग्य है। इसके साधन द्वारा किसी प्रकार की व्याधि अथवा क्लेश साधक के शरीर में नहीं हो सकता और दिन दिन आरोग्यता बढ़ती जाती है। भस्त्रिका प्राणायाम की संख्या तथा मन की धारणा के तारतम्यानुसार सकल रोगों का मूलोच्छेद हो जाता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भ्रामरी प्राणायाम

आसन वद्ध हो मुँह बन्द करके दोनों नासिका से भँवरे के जैसा धीरे धीरे नाद करते हुए पूरक करना, फिर कुम्भक करके पीछे भी धीरे धीरे भँवरे के जैसा नाद करते हुए रेचक करना, इसको भ्रामरी प्राणायाम कहते हैं। इससे मन को आनन्द होता है।

मूर्च्छा प्राणायाम

आसन वद्ध होके भरपूर पूरक करना फिर जालन्धर बंध करके पीछे धीरे धीरे रेचक करना चाहिये। इससे मन में मूर्च्छा उत्पन्न होके उत्तम सुख होता है।

प्लाविनी प्राणायाम

वद्ध पद्मासन के हाथ छोड़ कर पालथी जैसी की वैसी रख के चित्त होकर सो जाना, फिर दोनों हाथ माथे पर से लेकर बाँए हाथ से दाहिना और दाहिने हाथ से बायां भुजदण्ड पकड़ना, इस प्रकार मत्स्यासन करके पूरक से पेट में भरपूर वायु भरना और कुम्भक करना चाहिये। ऐसा करने से योगी कमल के पत्ते के समान पानी पर तैरता है। यह अभ्यास का फल है।

द्रष्टव्यः—प्राणायाम प्रकरण में कुम्भक आदि की सिद्धि होने के लिये कहे हुए क्रम से मन लगा के अभ्यास करना चाहिये। एक दम सब प्रकार के प्राणायाम सिद्ध होने का प्रयत्न करने से एक भी सिद्ध नहीं होगा, यह बात साधक को पक्की ध्यान में रखनी चाहिये।

प्राणायाम सिद्धि लक्षण।

जो प्राणायाम करते करते पसीना आजाय तो कनिष्ट प्राणायाम की सिद्धि हुई ऐसा समझना चाहिये। जो प्राणायाम करते

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते इन्द्रियाँ काँपने लग जायँ तो मध्यम प्राणायाम की सिद्धि हुई ऐसा समझना। जब प्राणायाम करते करते (मांडुकी वृत्ति) अर्थात् चूतड़ समेत आसन हिलने लगे तब उत्तम प्राणायाम की सिद्धि हुई। ऐसा समझना चाहिये।

क्रिया सिद्धि ही योग की सिद्धि है।

अब इसके आगे स्वरोपचार अर्थात् प्राणायाम द्वारा चिकित्सा की विधि लिखी जाती है।

स्वर चिकित्सा।

स्वर प्रधानतः दो प्रकार के होते हैं ऐसा पूर्व लिखा गया है। एक को सूर्य्य स्वर (इडा नाड़ी) और दूसरे को चन्द्र स्वर (पिंगला नाड़ी) कहते हैं। दाहिने नासिका पुट से सूर्य स्वर और बांयी नासिका पुट से चन्द्र स्वर का उच्चारण होता है। सूर्य्य स्वर के समय शरीर में दिवा और चन्द्र स्वर के समय शरीर में रात्रि होती है। स्वाभाविक श्वासोच्छ्वास शरीर को स्वस्थ रखता है और अस्वाभाविक श्वासोच्छ्वास से शरीर में रोग पैदा होते हैं। जिस देहधारी की श्वास प्रश्वास क्रिया नष्ट हो जाती है, वह अवस्था मृत्यु कहलाती है। श्वासोच्छ्वास की स्वाभाविक गति यह है कि मनुष्य दीर्घ और पूर्ण श्वासोच्छ्वास करता रहे। अपूर्ण और शीघ्र शीघ्र श्वासोच्छ्वास होना अस्वाभाविक गति है। इस तरह अस्वाभाविक श्वास क्रिया से मनुष्य शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त होता है। जल्दी श्वास का चलना मृत्यु को निमन्त्रण देना है। यह योग शास्त्र का कथन है श्वासोच्छ्वास अस्वाभाविक रूप में चलने से मनुष्य देह शीघ्र ही जीर्ण होता है। इसीलिये योगी जन श्वास की गति को अपने अधिकार में रखकर पूर्ण आयु तक जीवन व्यतीत करते थे। श्वास की गति समझ कर कार्य करने से कभी निराश नहीं होना पड़ता। सब कामों में सफलता प्राप्त होती है। इस अनोखी विधि को नहीं समझने से ही प्रत्येक कार्य असफल होते हैं और अनेक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकार की व्याधियाँ भुगतनी पड़ती हैं। अन्यथा इस श्वास क्रिया को अपने अधिकार में रखकर भिन्न भिन्न गतियों को मालूम करने से बहुत से रोगों की चिकित्सा भी हो सकती है। स्वर साधन से जो साधारण लाभ होते हैं कुछ विधि आगे वर्णन किया जाता है।

स्वर साधन से साधारण लाभ।

दिन को सूर्य्य स्वर चलावे, रात्रि को चन्द्र स्वर रखे। ऐसा रखने वाला मनुष्य सदा स्वस्थ रहेगा। क्योंकि गरमी, सरदी इस विधि से सम्भाव रहेंगे। आरोग्यता में दाहिना बांया दोनों स्वर बराबर देर तक चलता है दाहिना स्वर जब चलता है तब फेफड़े को ताकत पहुँचाती है, कारण कि फेफड़ा (जिगर) दाहिनी तरफ हैं। और दाहिने हिस्से विशेष चलते हैं। इसलिये दाहिना स्वर तेज चला करता है।

स्वर परिवर्तन विधि।

जिस स्वर को परिवर्तन करना चाहो उसकी दूसरी करवट १० मिनट तक सोने से स्वर परिवर्तन हो जायगा। यदि रात्रि को ५ मिनट बाई करवट लेटकर पश्चात् सीधे ५ मिनट तत्पुनः दाहिना करवट बराबर समग्र रात्रि ६ घंटे सोने का अभ्यास सदैव रखने से दिन को सूर्य्य स्वर तथा रात्रि को चन्द्र स्वर बरावर रहेगा। लाभ—ऐसा रखने वाले को दो तीन दिन पूर्व ही भविष्य की बुरी भली घटनाओं की सूचना हो जाया करेगी।

स्वरोदय और खान पान।

सख्त चीजें दाहिने स्वर में खावे। पतली (नरम) चीजें बांये स्वर में। ऐसा करने से पाचन शीघ्र होगा।

कार्य्याकार्य्य विचार।

प्रत्येक कार्य्य का विचार पूरक स्वर अर्थात् श्वास को भीतर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खींचते समय करे। रेचक स्वर अर्थात् श्वास को बाहर फेंकते समय सांसारी कोई भी कार्य्य का विचार न करे। ईश्वर प्रार्थना सम्बन्धी काम भी पूरक स्वर में करने से शीघ्र लाभ होता है। अनिष्ट कार्य का विचार रेचक में करना चाहिये।

स्वरोदय द्वारा व्याधियों की चिकित्सा।

(१) मसाना अर्थात् पेड़ू (नाभी) के नीचे का भाग (मुत्रकृच्छ आदि में बायें स्वर और पेट की बीमारी में दाहिना स्वर साधना चाहिये।

(२) ज्वर में दाहिनी करवट सोने से चन्द्र (बांया) स्वर चलकर शीघ्र उतरेगा! शीतज्वर वाले को बांयी करबट सोना चाहिये।

(३) सूर्य्य (दाहिना स्वर) नाड़ी से पूरक करने से गरमी शरीर में फैलती है। चन्द्र (बांया स्वर) नाड़ी से पूरक करने से गरमी दूर होती है। गरमी दूर करने की शीतली कुम्भक भी कहते हैं अर्थात् दोनों होठों के बाहर पक्षियों की चोंच की तरह जीभ निकाल के धीरेधीरे पूरक करके कुम्भक करना फ़िर दोनों नासिकापुटों से रेचक करना ऐसा करनेसे क्षुधा, तृषा, तथा कामादि की शान्ति होती है। और गुल्म, प्लीहा ज्वर व पित्त इत्यादि का नाश होता है। यह सकल प्रकार श्वास रोग तथा हृदय रोग को महौषधि है।

(४) स्वरोदय द्वारा नसोंकी सिकुड़न दूर करना हो तो, प्रातः उठते समय विस्तर पर चित्त लेट जाओ। तकिया निकाल कर दोनों बाहुओं को फैला दो और मुख बन्द करके सारा शरीर ढीला छोड़ दो और श्वास घटाओ, फिर धीरे धीरे लेने लगो। बीच में घबड़ाहट हो तो श्वास ले लो। पाँच सात बार गहिरा श्वांस अवश्य ले लेना चाहिए।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राणायाम द्वारा यौगिक चिकित्सा ।

यौगिक चिकित्सा की विधि शरीर और मन का आरोग्य बढ़ाने के प्रति अब आगे दिये जाते हैं। सब से प्रथम निम्न त्रिविध प्राणायामों के द्वारा ही सर्व क्रियायें की जांयगी।

(१) 'रेचक'—जिसमें वमनके समान वायु दोनों नासिका पुटों से निकाली जाती है।

(२) 'पूरक'—वायु को धीरे धीरे भीतर भरना होता है।

(३) 'कुम्भक'—वायु को भीतर रोकना होता है।

(१) थकान दूर करने का 'सुखदी प्राणायाम' १-प्रथम दोनों नासिका पुटों से पूरक करो अर्थात् श्वास को भीतर खींचो। २-किञ्चित् मात्र ठहरो। ३-रेचक मुख को सीटी जैसे बजाते हैं बनाकर रेचक करो अर्थात् भीतर के श्वासको बाहर फेंको परन्तु थोड़ा थोड़ा रुककर कई बार बाहर निकालो।

(२) साधारण ज्वर दूर करने तथा कुछ देर के लिए क्षुधा बन्द करने का प्राणायाम १-बांया पैर दाहिनी जांघपर रखो, गर्दन और पीठ को सीधा खड़ा रखो। हथेलियों को घुटनों पर रख कर मुख बन्द करलो। २-दोनों नथनों से धीरे धीरे परन्तु शीघ्रता करते हुए पूरक करो, पश्चात् रेचक करो। ३-इस अभ्यास को कई बार करो, जब तक पसीना न आजावे। थक जाने पर ऊर्ध्वरेता प्राणायाम कर दो।

(३) वीर्य्यस्तम्भक (ऊर्ध्वरेता) प्राणायाम १-बायें पैर की एड़ी मलेन्द्रिय के नीचे रखो और दाहिना पांव बायें पैर की जंघा पर रखो, फिर किसी एक से चाहे बायां या दाहिनी नासिका पुट से प्रथम नाभि में ध्यान ठहरा कर ध्यान से ही दक्षिण नथने से (अपान वायु को) उदर भरे। २-फिर, जितनी देर सुख पूर्वक हो सके उतनी देर वहीं ठहरा कर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाम नासारन्ध्र से धीरे धीरे बाहर निकाल कर, जितनी देर सुख पूर्वक हो सके बाहर भी रोके। ३-फिर दूसरी नासारन्ध्र द्वारा उसी प्रकार भरे रोके और दक्षिण नासिका का छिद्र से बाहर छोड़ देवे। ४-इतनी क्रिया का एक प्राणायाम जान कर ऐसे ऐसे कम से कम सात प्राणायाम करने से वीर्य का स्तम्भन और आकर्षण होने से बल का क्षय नहीं होता। दुःखित स्त्री पुरुष के प्रदर और प्रमेहादि रोग भी दूर हो सकते हैं।

(४) ब्रह्मचर्य साधक प्राणायाम १-चित्त लेट जाओ और कानों को मोम से बन्द कर लो, जिससे बाहर के शब्द सुनाई न दे और नासिका के अग्र भाग पर दृष्टि जमाओ २-आधा घंटा तक इसी स्थिति में रहो, और रुक-रुक कर गहरी श्वास लेते रहो। ३-फिर आंखों की पुतलियों को ऊपर चढ़ाओ और भ्रुवों के मध्य में दृष्टि जमाओ। ऐसा करने से आंखें बन्द होने लगेंगी उन्हें बन्द हो जाने दो। इस क्रिया के अभ्यास से कुम्भक करने की शक्ति बढ़ती है, चित्त एकाग्र रहता और इन्द्रियों का निग्रह भी होता है। इस स्थिति में अधिक रहने से भीतर के शब्द 'अनहद' सुनाई देने लगते हैं।

(५) समस्त शरीर को स्वस्थ रखने का प्राणायाम १-बायें घुटने पर दाहिना और दाहिने घुटने पर बायां पैर रखो और दाहिने हाथ से पीठ की ओर से दाहिने पैर के अंगुठे तक और इसी प्रकार बायें हाथ से बायें पैर के अंगुठे को पकड़ो शरीर अकड़ा और तना हुआ रखो। २-पूरक, कुम्भक और रेचक करो। ३-कुछ देर अभ्यास करो कि शरीर के रोंगटे अच्छी तरह से खड़े मालूम होने लगे।

(६) शक्ति प्राप्त करने और स्थिर रखने के लिए प्राणायाम १-पद्मासन से बैठो। २-गुदा को रूई से खूब भर दो। ३-दाहिने नथने से पूरक करो। ४-अपने टोडी को छाती पर रख कर सीधे हाथ से बायें पैर के अंगुठे को और बायें हाथ से

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीधे हाथ के अँगुठे को पकड़ो और माथे को किसी घुटने से लगाकर कुम्भक करो। ५-बांये नथने से रेचक करो। ६-दूसरे प्राणायाम में बायें नथने से पूरक और सीधे नथने से रेचक करना चाहिये। ७-यह अभ्यास क्रमशः बढ़ाते हुये एक घंटे तक करना चाहिये।

(७) रक्त संचारक और विचार शक्ति की वृद्धि के लिये प्राणायाम १-पद्मासन से बैठो, दाहिने हाथ से दाहिने पैर और बायें हाथ से बायें पैर के अंगुठे को पकड़ो। २-बायें नथने से पूरक करो। ३-फिर कुम्भक करो। ४-और दायें नथने से फिर धीरे धीरे रेचक करो, फिर दाहिने नथने से पूरक करो और बायें से रेचक करना चाहिये। प्रत्येक समय रेचक और पूरक क्रम बदलते जाना चाहिए। ५-पसीना आने पर यह अभ्यास बन्द करना चाहिये।

(८) स्मृति वर्द्धक, इच्छाशक्ति उत्तेजक प्राणायाम १-बायें पैर की एड़ी मलेन्द्रिय (गुदा) पर और दाहिना पांव को जंघा पर रखो और टोडी को छाती से लगाओ, आँखें बंद रखो। २-गहरा और लम्बा श्वास लेकर रेचक करो। ३-फिर कुम्भक और उसके बाद रेचक कर डालो।

(९) शीत से बचने के लिये प्राणायाम १-दायां पांव मलेन्द्रिय के नीचे रखो और टोडी छाती पर रखो, दोनों हाथों से बढ़ाकर सीध में फैले हुए दाहिने पांव को पकड़ लो और माथे को दाहिने घुंटने से लगा दो। २-बायें नथने से पूरक करके फेफड़े को वायु से भर दो। ३-दृष्टि को नासिका के अग्रभाग पर जमा करके कुम्भक करो। ४-फिर दाहिने नथने से रेचक करो। ५-एक घन्टा अभ्यास करने से पसीना आ जाता है फिर अभ्यास बंद कर दो।

(१०) आमाशय के साधारण रोग को दूर करने का प्राणायाम

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१-दुजानू होकर बैठो और हाथों की हथेली फैलाकर जंघाओं पर रखो वा इस प्रकार की हथेली पीठ के ऊपर हो। २-प्रथम पूरक, फिर कुम्भक, फिर रेचक करो। ३-इस अभ्यास को क्रमशः बढ़ाकर एक घन्टा तक ले जाओ।

(११) दांतों के रोग दूर होने और शरीर पुष्ट करने के लिए प्राणायाम १-बायां पैर दाहिनी जंघा और दाहिना पैर बाईं जंघा पर रखो और दाहिना हाथ से दाहिने पैर और बायें हाथ से बायें पैर के अंगुठे को पकड़ो। २-पूरक मुख से इस प्रकार करो कि दोनों दांतों की पंक्तियाँ भी श्वास लेने में सहायक हों और 'सीटी' की आवाज के सदृश ध्वनि होने लगे। ३-कुम्भक करके दोनों नथनों से धीरे धीरे रेचक करदो। ४-पैंतालिस मिनट तक अभ्यास बढ़ाते हुए ले जावो।

(१२) शरीर में गर्मी की मात्रा बढ़ाने के लिए प्राणायाम—१-सिद्धासन से बैठ कर दोनों नथनों से पूरक प्रथम धीरे धीरे करके रेचक करो। २-पुनः पूरक उस (पहले) से कुछ तेजी से करो और फिर रेचक। ३-इसी प्रकार पूरक का वेग या क्रम बढ़ाते आवो जिससे श्वास लोहार की धौंकनी की तरह चलने लगे। ४-पसीना आने पर अभ्यास बन्द कर लो।

द्रष्टव्य—इस अभ्यास से शरीर के जोड़ों और पिंडरियों का दर्द भी जाता रहता है परन्तु अभ्यास बढ़ाकर एक घन्टे तक ले जाना चाहिए।

(१३) जिह्वा, तालु, नाक, कान और हलक को आरोग्य रखने वाला प्राणायाम १-पद्मासन से शान्ति पूर्वक बैठ जाना। २-जिह्वा की नोक तालु से लगाओ फिर उनकी सहायता से मुख से पूरक करो। ३-समस्त शरीर को ढीला छोड़ते हुए कुम्भक करो। ४-नाक से रेचक करो। ५-अभ्यास क्रमशः पैंतालिस मिनट तक ले जाओ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१४ ज्वर निवारक प्राणायाम

ज्वर चढ़ने के पहले या प्रारम्भ में जिस नासिकापुट से श्वांस चलती हो उसे बन्द कर देवे। जब तक न उतरे तब तक और शरीर हलका न हो तब तक उस नथने को बन्द कर रक्खे। नासिका पुट पहिले लिखी हुई विधि से बन्द करे। जो ज्वर १०—१५ दिनमें अच्छा होने योग्य है वह ४—५ दिन में इस विधि से अच्छा हो जायगा। ज्वर सर्दी का है या गरमी का है यह अच्छी तरह से जान लेवे। सर्दी का ज्वर होगा तो १ बायां स्वर चलेगा और गरमी का हुआ तो दाहिना स्वर चलेगा। इस प्रकार स्वर को बन्द कर के चांदी जैसे श्वेत का ध्यान करे तो शीघ्र फल प्राप्त होगा।

—'अव्यर्थ मुष्टि योग'—रत्नज्योति की जड़ बीमार के हाथ में बाँधने से सब तरह का ज्वर अच्छा हो जाता है। विषमज्वर जिसमें ज्वर पारी पारी से आता हो उसमें श्वेत अपराजिता (कौवाटोटी) या मौलसिरी के कितने ही पत्ते हाथ से रगड़ कर कपड़े में पोटरी बाँध ज्वर की पारी के दिन सवेरे सूघने से पारी का बुखार छूट जायगा।

१५ महा अष्टाङ्ग अपराजित धूप

धूप की औषधि —नीम के पत्ते ८० तोला, हर्रे ४० तो०, गुगुल २० तो०, सरसों २० तो०, वच ५ तो०, देवदारु ५ तो०, आक २० तो०, अगर ५ तो०, श्रीवेष्ठ (सरेस) ५ तो०, मोर पंख ५ तो०, चन्दन ५ तो०, हींग १ तो०। इन चीजों को एकत्र कूट पीस कर धूम्र रहित कोयले की आँच पर डाले और रोगी के निकट रक्खे। इस धूम्र प्रयोग में कीटाणु नाशक शक्ति होने से किसी प्रकार की संसर्ग जन्य बीमारी होने का भय नहीं रहता। कदाचित् रोग बीज आगे ही प्रविष्ट हो गये हों और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीमारी का हमला हो गया हो तो भी प्लेग आदि रोगियों के निकट २४ घण्टे बराबर उपरोक्त लिखित धूप किया करें अथवा नीम ही जलाया करे। रोगी जरूर चंगा हो जायगा। इस धूप के द्वारा साधारण ज्वर भी शीघ्र ही अच्छे हो जाते हैं। श्वास प्रश्वास द्वारा रोगी के शरीर में औषधि धूम्र प्रवेश करने से शरीर के रोग बीजाणु नष्ट हो जाते हैं। इसी कारण सब प्रकार के ज्वर अपस्मार आदि रोग नष्ट होते हैं। निःश्वास परिवर्तन और इस धूम्र क्रिया से सब प्रकार के ज्वर तथा अन्यान्य रोग आराम होते हैं। धूम्र विधि प्रातः सायं तथा रात्रि के समय करना चाहिये।

१६ सिर का चक्कर निवारणार्थ उपाय

सिर में चक्कर होने लगे तब दोनों हाथ की कुहिनी पर कपड़े की पट्टी कस कर बांध देवे। दस पांच मिनट में सिर का चक्कर बन्द हो जायगा। कुहनी इतनी जोर से बांधना चाहिए जिसमें बीमार के हाथ में निहायत दर्द हो। तकलीफ मिट जाने से पट्टी खोल डालना चाहिए।

१७ सूर्यावर्त (आधासीसी) हटाने का क्रिया

कपाल के बीच से दाहिने या बांए कपाल में बड़ा भारी दर्द सूर्योदय से लगाकर जैसे जैसे सूर्य तेज होता चला जाता है इस बीमारी का जिस पर हमला हो गया हो तो उस रोगी के उस हाथ की कुहनी पर जोर से कपड़ा बांधिये जिस तरफ सिर में दर्द होता हो। थोड़े ही देर में दर्द दूर होगा बीमारी ठण्डी पड़ जायगी। यदि दूसरे दिन फिर माथा दर्द करे और रोज एक ही नथने से श्वांस निकलते समय आधासीसी शुरू हो तो तकलीफ मालूम पड़ते ही उस नथने को बन्द करे और पहले की तरह हाथ की कुहनी बाँध डाले। इस उपाय से बात की बात में फौरन दर्द दूर हो जावेगा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१८ सिर दर्द निवारण क्रिया।

सिर के दर्द वाला रोगी प्रातः बिस्तर त्यागते ही नथने से ठण्डा पानी लेवे इससे मस्तक ठण्डा रहेगा और भारी न मालूम पड़ेगा। किसी बर्तन में ठण्डा पानी भर के उसमें नाक डुबा कर धीरे धीरे गले के भीतर पानी खींचना चाहिए। कुछ दिन अभ्यास से यह क्रिया सरल हो जायगी। और ऐसा करने से अवश्य ही लाभ होगा।

१९ अजीर्ण परिहारक उपाय।

अन्न, जल, मिठाई वगैरह जो कुछ खाना हो, वह दाहिने नथने से श्वांस चलते समय खाना चाहिए। प्रति दिवस इसी नियमानुकूल भोजन करने से बड़ी सरलता से भोजन पचता है। कभी भी अजीर्णता की बीमारी और उदर रोग पैदा नहीं होंगे। खाने के पश्चात् बांई करवट कुछ देर लेट रहना चाहिए। जिसे समय न मिले वह भी खाने पर ऐसा उपाय करें, कि जिसमें १०-१५ मिनट दाहिने नथने से श्वांस लेवे और निकाले। बांए नथना को पूर्व कहे अनुसार रूई से बन्द कर दे। सख्त खाना खाने पर भी इस नियम से शीघ्र पच जाता है।

२० आँव व अतिसार निवारक चिकित्सा।

श्वांस को रोक नाभि खींच नाभि का ग्रन्थि देश सौ दफे रीढ़ से मिलाने पर आँव व अतिसारादि पेट के गड़बड़ से पैदा हुई सब तकलीफ मिटती है, भूख लगती है और पाचन की ताकत बढ़ती है।

२१ हृद्रोग व प्लीहा दुःख निवारण क्रिया।

रात को बिस्तर पर लेटने और प्रातः बिस्तर छोड़ते समय हाथ पैर सिकोड़ कर लम्बे ताने। फिर, इस बगल उस बगल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर शरीर को सिकोड़े और फैलावे। प्रति दिवस दो चार मिनट इसी तरह करने से प्लीहा (यकृत) दब जायगी। प्रति दिवस ऐसा ही अभ्यास रहने से पिलही और कलेजे की बीमारी के लिये तकलीफ नहीं उठानी पड़ेगी।

२२ दन्त रोग निवारक उपाय।

नित्य जितने दफे पाखाने जाओ या पेशाब करो, उतने दफे नीचे ऊपर के दाँत एक में मिला जरा जोर से दबाए रहो। जब तक पाखाना या पेशाब उतरे तब तक दाँत से दाँत दबाए रखना चाहिये दो चार दिन इसी प्रकार करने पर ढीले दाँत मजबूत होते हैं। और बहुत दिन तक काम देते हैं और दाँत की कोई तकलीफ बढ़ने का डर नहीं रहता इसी कारण से बोलना ऐसे समय में मना किया गया है।

२३ टपकन की तकलीफ दूर करने के उपाय।

छाती, पीठ या कोख किसी भी जगह टपकने की तकलीफ या दूसरा किसी तरह का दर्द उठने से, जैसे ही वह मालूम पड़े, वैसे ही जिस नथने से श्वांस निकलती हो। उसे बन्द कर दो ऐसा करने से सर्व प्रकार का दर्द दो चार मिनट में कम हो जायगा। जब तक पूरी तरह से ठीक न हो तब तक ऐसा ही करता रहे। बराबर दर्द आराम हो जायगा।

२४ श्वास (दमा) शमनार्थ क्रिया।

जब दम बढ़े या श्वांस फूले तब जिस नथने से श्वांस चलती हो उसे बन्द कर दूसरे नथने से श्वांस निकाले ऐसा होने से दस पन्द्रह मिनट में श्वांस का फूलना रुकेगा, रोज इस प्रकार से एक महीने तक करना चाहिये। श्वांस की बीमारी अवश्य नष्ट होगी। दिन में जितनी ही बार यह प्रयोग किया जायगा, उतनी ही जल्दी यह बीमारी पांछा छोड़ देगी। दमे की बराबर तकलीफ पहुँचाते

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाली बीमारी दूसरी नहीं दिखाई देती। दम फूलते समय इस प्रकार प्रयोग करने से कोई तरह की औषधि सेवन न करने पर भी आश्चर्य युक्त लाभ होता है। श्वास रोगियों को अवश्य अनुभव करना चाहिये।

२५. वात व्याधि शमनार्थ उपाय।

वात वाले रोगी को भी जिस नथने से श्वांस दर्द के समय चलती हो उस समय उस नथने को बन्द कर देवे और दूसरे नथने से श्वांस प्रश्वास करे इस प्रकार से अनेक प्रकार के वात रोग आराम होते हैं।

दूसरा उपाय—रोज भोजन के पश्चात् कंघी से सिर ऊँछ डाले। सिर इस प्रकार ऊँछे कि जिसमें उसके काँटे सिर में लगते रहें। इसके बाद वीरासन यानी दोनों पैर पीछे को हटा कर थोंद से दबा कर बैठे। रोज दोनों समय भोजन के पश्चात् इसी तरह बैठने से वात कितने ही दिन का क्यों न हो अवश्य ही चला जायगा इस प्रकार बैठ कर पान सुपारी खाने में भी कोई हानि नहीं होती। तन्दुरुस्त आदमी को भोजन के बाद हमेशा ऐसी बैठक रखना चाहिए। वात रोग का आक्रमण कभी न होगा। कंघी रबड़ का न हो। इस प्रकार नित्य अभ्यास रखने से बाल शीघ्र नहीं पकते। नेत्रों की दृष्टि ठीक रहती है।

२६ नेत्र रोग निवारक उपाय।

नित्य प्रातः बिस्तर से उठ सब से पहले मुँह में जितना पानी समाय उतना पानी भरे। दूसरे पानी से बीस छींटे आँख पर मार कर धो डालें। और नित्य भोजन समय खाना खाने के पश्चात् मुँह धोते समय कम से कम सात दफे आँख पर पानी का छींटा लगाना चाहिये।

जितने दफे पानी पीने में आवे, उतने दफे आँख और सिर धोना न भूले। नित्य नहाने में तेल लगाते समय पहले दोनों पैर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के अँगूठों के नखून तेल में डुबाकर पीछे से तेल मलना चाहिये। ये सब क्रिया आँख के लिए बहुत लाभदायक है। इससे नजर की ताकत बढ़कर आँख ठण्डी पड़ती है और आँख में कोई तकलीफ होने का डर नहीं रहता। आँख आदमी की असली दौलत है, इसलिए रोज इस कायदे पर चलने में किसी को उदास होना उचित नहीं।

२७ रक्त परिष्कार करने का कौशल।

जिह्वायावायुमाकृष्यउदरेपूरेयच्छनैः।
क्षणश्चाकुम्भकंकृत्वानासाभ्यांरेचयेत्पुनः॥

(गौरक्षसंहिता)

जीभ से हवा को खींचे यानी दोनों ओठ आगे बढ़ाकर बाहर की हवा धीरे धीरे खींचता रहे। इसी तरह अपनी अपनी दम भर हवा खींच मुँह बन्द रखते हुए घूँट लगा हवा को पेट में पहुँचाए। पीछे थोड़ी देर इस हवा को कुम्भक पर रोक दोनों नथनों से बाहर निकाल दे। इस प्रकार नियम से बाहर हवा खींचने पर कुछ दिन बाद खून साफ होता है। और शरीर कामदेव जैसा चमकीला हो जाता है अर्थात् स्वर्ण मान चमकने लगता है। शीतली कुम्भक करने से अजीर्ण और कफ पित्तादि रोग पैदा नहीं होते। जिन बीमारियों पर खून साफ़ होने के लिए सालसा सेवन करते हैं उसके बदले अगर यह शीतली कुम्भक पृ० १०४ में लिख आए हैं किया जाय तो सालसे की वनिस्बत शीघ्र टिकाऊ फल इससे मिल सकता है। नित्य दिन रात के बीच कम से कम तीन चार दफे पाँच सात मिनट तक दृढ़ता से बैठ इसी तरह मुँह से हवा खींचना और नाक से बाहर निकलना पड़ता है। जितनी अधिक बार यह क्रिया करेंगे, उतना ही शीघ्र फल प्राप्त होगा परन्तु मैली कुचैली और हवा बिगड़ी हुई जगह में, पेट के

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीचे और मिट्टी के तैल से जलते हुए चिराग रखे मकान में, खाया हुआ भोजन हजम न होने पर यह क्रिया नहीं करना चाहिए। इस बात पर भी विशेष ख्याल करना चाहिए कि जिसमें हवा निकलने बाद हाँपना न पड़े साफ हवा से भरी हुई जगह में दृढ़ता से बैठ कर धीरे धीरे हवा खींचे और निकाले।

२८ समस्त प्रकार के शूल का दर्द हटाने का उपाय।

पृ० १०४ के अनुसार शीतली कुम्भक करने से समस्त प्रकार का शूल वा दर्द जो किसी औषधि सेवन करने से नहीं मिटता और छाती पेट वगैरह की भीतरी तकलीफ जरूर ही मिट जाती है।

द्वितीय उपाय बुखार, किसी तरह का दर्द फोड़ा घाव वगैरह बीमारी में बहुत तकलीफ मालूम पड़ती हो, उस समय जिस नथने से श्वांस चलती हो, उसे फौरन बन्द कर दे। जितनी देर शरीर असली हालत पर न पहुँचे, उतनी देर या उतने दिन वह नथना बन्द रखे। ऐसा करने से शीघ्र ही शरीर रोग रहित हो जायगा। विशेप दिन दुःख उठाना न पड़ेगा।

२९ थकावट दूर करणीय क्रिया।

राह चलने से वा किसी परीश्रम कार्य को पीछे शरीर थका हुआ मालूम पड़ने पर या धातु गर्म होने पर दाहिने बगल कुछ देर लेट रहे, इस क्रिया से फौरन बहुत शीघ्र थकावट और हरारत दूर हो जायेगी।

३० धूप की बीमारी से बचने का उपाय।

कड़ी धूप के समय किसी जगह जाने पर रूमाल, दुपट्टा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

या अँगोछे से दोनों कान को ढाँक लेवे धूप से पैदा हुई कोई बीमारी होने का डर नहीं रहेगा धूप की गर्मी से शरीर न घबरायेगा और न लू लगेगी। दोनों कान इस तरह ढकना चाहिये कि सारे कान मुँद जावें और किसी तरह की हवा उनमें न लगे। इसी प्रकार शीत की बीमारी से बचने का उपाय भी जानना।

३१ समग्र व्याधियों से बचने का उपाय।

जो दिन को बाएँ और रात्रि को दाहिने नथने से श्वाँस लेता है, उसके शरीर में किसी तरह की बीमारी पैदा नहीं होती। सुस्ती छूटती है और दिन दिन चैतन्यता बढ़ती है। दस पन्द्रह दिन रुई या कपड़े की गाँठ (जो निःश्वास परिवर्तन में बतला चुके हैं) जिस नथने को बन्द करना है उस नथने में रख अभ्यास डालने पर आप ही आप इस नियम से श्वाँस चलने लगेगा।

३२ स्वप्नदोष और वीर्यस्तंभन का अव्यर्थ उपाय।

स्वप्नदोष और वीर्य की दूषित अवस्था के कारण ही होता है। इसलिये प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है कि स्वप्नदोष न होने की खबरदारी रखें। आज स्वप्नदोष के ही कारण अनेक युवकों का संहार हो रहा है। स्वप्न प्रमेह का प्रधान कारण मानसिक विचारों का विकारी होना है। जब तक मनुष्यों के विचार सर्व प्रकार के मैथुनों से सुरक्षित रहेंगे, तब तक कदापि स्वप्न प्रमेह आक्रमण नहीं कर सकता। इस लिये प्रत्येक आरोग्य जीवी पुरुषों का कर्तव्य है, कि मैथुन सम्बन्धी विचारों को न होने दें। यही उपाय स्वप्न दोष नष्ट करने के लिए सर्वोपरि है। बिना विचारों के स्वप्न दोष से छुटकारा पाना कठिन है। इस का एक मात्र उपाय विचारों की शुद्धता के साथ साथ नीचे के प्रयोगों को

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बर्ताव में लाने से अत्याश्चर्य फल प्राप्त होता है, जो सैकड़ों औषधियों द्वारा भी नहीं मिल सकता।

३३ वीर्य्यरक्षा के अद्वितीय साधन

विचित्र आश्चर्य कारक प्रयोग और परिचय।

साधन के लिए प्रमुख तत्व - प्रत्येक तीव्र बुद्धि के विचारवान मनुष्य फौरन पहिचान जायँगे और मूत्र निर्गत होते समय गुदा द्वार में भी संकोचन और प्रसारण क्रिया होती रहती है। लिंग गति देकर देखिये। जैसे जैसे गुदा द्वारा संकुचित होगा वैसे ही लिंग में अधिकाधिक गति उत्पन्न होगी और लिंग में से वीर्य तथा मुत्र गिरने नहीं पावेगा। वीर्य और मूत्र गिरते समय गुदा प्रसरित होती है। पेशाब करते समय गुदा द्वार संकुचित कर के देखियें, उसी समय मूत्र बन्द हो जायगा।

इससे विचार में आ गया होगा, कि अगर गुदा द्वार की संकोचन प्रसरण गति अपने काबू में रहे तो वीर्य स्तम्भन और वीर्य पतन गति को अपने वश में रहने के लिए कुछ भी देर न लगेगी। इसलिए गुदा द्वार वश करना आवश्यक है।

जिस मनुष्य ने गुदा द्वार को अपने वश में कर लिया है, उसने वीर्य को भी अपने वश में कर लिया।

'वीर्य को वश में करते ही योगीजन ऊर्ध्वरेता कहलाते हैं।'

ब्रह्मचर्य अर्थात् वीर्य का रोकना ही सच्ची तपस्या है। वीर्य को रोकने से अनेक प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं, वीर्य एकत्र होने से मस्तक में अत्यन्त शक्ति पैदा होती है, जिसके सहारे मनुष्य अचिंत्य पराक्रम, अगाध विद्वत्ता, नूतन आविष्कार और प्रचण्ड लक्ष्मी को प्राप्त करते हुए स्वास्थ्य सहित दीर्घायुष्य भोगता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो मनुष्य विवाहित हैं उन्हें महीने में एक बार स्त्री से सम्बन्ध करना चाहिए। इससे विशेष मैथुन को जिसे चाह हो वह इस प्रयोग को न करे अन्यथा लाभ के बदले हानि होने का भय है।

वीर्यरक्षक प्राणायाम के सिद्धासन की विधि।

आसन इस प्रकार से जमाकर बैठो, जिसमें बाएँ पैर की एड़ी गुदा द्वार और अण्ड कोष के बीच में रहे उसे तुम ऐसा जानो, कि यह बैठने की गादी ही है। दाहिने पैर की एड़ी मूत्र नली की जड़ में ऊपर से लगाओ। आसन लगाने पर पैर का ऊपरी भाग नीचे और नीचली भाग ऊपर रखना चाहिए पैरों की अंगुलियों पर आसन न जमने पावे। आसन पूर्णतया जमने पर दोनों पैरों के मणीबन्ध परस्पर मिल जाते हैं। यही बराबर आसन जमाने की पहिचान है। यह भी बराबर विचार में रहे कि जहाँ पर एड़ी लगाई जाती है, वहाँ पर एड़ियों का अच्छी तरह से दबाव पड़ना चाहिए।

इस प्रकार आसन जमाने पर देखे, कि कौन से नथने से श्वांस निकलती है? जिस नथने से श्वांस निकलती न हो, उस नथने को हाथ के अंगूठे से अथवा किसी एक अंगुली से बन्द कर दे और जिस नथने से श्वांस बाहर निकलती हो, उस नथने से धीरे धीरे श्वांस भीतर खींचे। श्वांस खींचने पर उसी समय गुदा द्वार संकुचित कर लेवे. फिर प्रयोग सम्पूर्ण हुए बिना प्रसरित न करे। क्योंकि इसी क्रिया को काबू में करना है। इस गुदा द्वार क्रिया को अपने वश में किये बिना वीर्य को वश में करना व्यर्थ है। इसलिए जहाँ तक हो सके प्रयोग करते समय गुदा द्वार को कभी प्रसरित न होने दो और बराबर संकुचित किये रहो। तत्पश्चात्—गुदा द्वार संकुचित करने के बाद दोनों नथने बन्द कर लो। पेट के भीतर जो श्वांस खींच रखी है, उसे बाहर न

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छोड़ो और पेट में गति दो अर्थात् मूत्र नली के द्वारा कोई पदार्थ पम्प की तरह पेट से खींच रहे हैं इस प्रकार पेट छोटा बड़ा करो। इस प्रकार क्रिया उतने समय तक करो, जितने समय तक श्वांस भीतर रख सको। श्वांस छोड़ते समय पेट की गति बन्द करदो और गुदा द्वार पहले की तरह संकुचित ही रखो। पेट में गति देते समय भी गुदा संकुचित ही रहे। गति बन्द करके जिस नथने से श्वांस भीतर न ली हो, उस दूसरे नथने से श्वांस बिलकुल धीरे धीरे बाहर छोड़ो। इसी रीति से एक प्राणायाम हुआ। इस प्रकार तीन प्राणायाम एक बैठक में करो। एक महीने के बाद ५ प्राणायाम एक बैठक में करो। फिर धीरे धीरे पन्द्रह प्राणायाम एक बैठक में करने की आदत डालो। इसका असल मतलब यही है कि एक बैठक में १०–१५ प्राणायाम करने तक गुदा द्वार संकुचित रखने की शक्ति बढ़े, तब आसन सिद्ध हुआ ऐसा जानना चाहिये।

प्रयोग महत्व—

इस प्रयोग द्वारा आरोग्य तो प्राप्त होता ही है, एवम् प्राणायाम की भी आदत पड़ती है। इस प्रयोग के द्वारा वीर्य भी वश में होता है। वीर्य के वश होने से आयु तक स्वप्नदोष नहीं होता। और अपूर्ण वीर्य स्तम्भन होगा। वीर्य स्तम्भन की इतनी शक्ति बढ़ जाती है कि बिना तुम्हारी इच्छा के बाहर नहीं निकल सकता, चाहे सारी रात मैथुन करो वीर्य पात न होगा। स्वप्नदोष इसलिए नहीं होगा, कि स्वप्नदोष के समय नींद से उठने की और गुदा द्वार संकुचित कर प्राणायाम से वीर्य स्वस्थान में पहुँचाने की शक्ति प्राप्त होती है।

स्वप्न दोष, वीर्य पतन (शीघ्र स्खलन) और अन्यान्य प्रमेहादि भी नहीं होते। अर्थात् गुदा द्वार वश में होने पर मन चाहा बन्धेज रहने की शक्ति प्राप्त होती है। प्राणायाम तीन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महीने से १ वर्ष तक अवश्य करे: तीन महीने की आदत से मन चाहा बन्धेज प्राप्त होता है।

स्मरण रहे कि प्राणायाम करते समय श्वांस को जबरदस्ती पेट में रखने का उद्योग न करे। उसी प्रकार जल्दी भी न करें। प्राणायाम करने की जगह खुली और हवादार रहे, जहाँ शुद्ध वायु रहा हो प्रयोग दो बार प्रातः सायं करे। एक बार भी कर सकते हो। परन्तु आरम्भ करनें पर एक भी दिन खाली न जाने पावे। पहले पहल यदि पेट की नसें दुखने लगें या नल फूल जाय तो घृत से मालिश करे या दही की पुल्टिस बना कर सेके।

पथ्य—प्राणायाम करते समय साधारण भोजन करना चाहिए, जिसमें शीघ्रता से पाचन हो सके। खटाई, मिर्च और तेल के पदार्थ न खावे। एक मास तक तो अवश्य न खावे। स्त्री प्रसङ्ग महीना में एक या दो बार करे। भोजन में दूध, भात घी, तूअर (अरहर) की दाल, मसूर या मूँग की दाल, गेहूं की रोटी, परवर, साग, मेथी की भाजी और लौकी (तुंबी) का साग सेवन करे।

'अपथ्य'—अत्यन्त स्त्री प्रसंग न करे, जड़ पदार्थ कन्द मूल वगैरह न खावे, दिन को न सोवे और रात्रि में जागरण न करे।

३४ स्वप्नदोष के लिए अतिसरल उपाय।

पाखाने जाते समय किसी बड़े बर्तन में पानी ले जाइये। दस्त होने के पेस्तर मुत्रेन्द्रिय के छिद्र पर ५-७ मिनट तक बारीक बारीक धार डालते रहिये और गुदा द्वार सिकुड़ती हुई रखिये, समय ५ मिनट पूरा होने पर मल त्याग कीजिए। शौच के बाद में फिर तीन मिनट तक पानी की धार बारीक बारीक छोड़ते रहिये। इस प्रकार नित्य करते रहने से स्वप्न दोष बन्द हो जाता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। साथ में कोई प्रमेह नाशक औषधि लेने से इस क्षुद्र क्रिया द्वारा बड़े बड़े पुराने और सब प्रकार के प्रमेह दूर होते हैं। स्वप्न प्रमेह के लिये तो बहुत ही उत्तम सरल क्रिया है।

द्रष्टव्य—इसके साथ में वटक्षीर (बड़ का दूध) पांच बून्द प्रातः बतासे में रखकर खाते रहने से बहुत ही शीघ्र स्वप्नदोष आराम हो जायगा। इसमें बिल्कुल सन्देह नहीं।

३५ वीर्य्याकर्षक प्राणायाम

वीर्य्याकर्षक व वीर्य्यस्तम्भक अर्थात् ऊर्ध्वरेता होने की विधि निम्न प्रकार जानना चाहिये :-

किसी एक चाहें बांया या दाहिने नासिका पुट से जैसा कि ऊपर लिख आये हैं प्रथम नाभी में ध्यान ठहरा के ध्यान से ही जैसे दक्षिण नथने से (अपान वायु को) उदर में भरे, फिर जितनी देर सुख पूर्वक हो सके उतनी देर वहीं ठहरा कर वाम नासारन्ध्र से धीरे धीरे बाहर निकाल कर जितनी देर सुख पूर्वक हो सके बाहर भी रोके। दूसरी वाम नासारन्ध्र द्वारा उसी प्रकार भरे, रोके और दक्षिण नासिका छिद्र से बाहर छोड़ दे। इतनी क्रिया को एक प्राणायाम जानकर ऐसे ऐसे कम से कम सात प्राणायाम करने से वीर्य्य का स्तम्भन और आकर्षण होने से वीर्य वृथा क्षय नहीं होता।

फल :—इस प्राणायाम के करने से प्रदर और प्रमेहादि से दुःखित स्त्री पुरुष का रज और वीर्य लघुशंका द्वारा बाहर निकल जाया करता है और जिसके कारण से वे प्रतिदिन निर्बल होते जाते हैं वह (रज, वीर्य) क्षय न होकर धातु क्षीण रोग जाता रहता है। अथवा जब कभी कामोद्दीपन हो कर तथा स्वप्नावस्था में सोते समय स्वप्न द्वारा रज वा वीर्यस्खलित हो जाने की शंका हो तो सावधान और सचेत होकर झटपट उठकर तत्काल ही इस प्राणायाम के कर लेने से वीर्य अपने ठहरने के स्थान

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्माण्ड में आकर्षित होकर ऊपर चढ़ जाता है और इन्द्रिय शान्त होकर कामदेव का वेग शान्त हो जाता है और उपासक योगी ऊर्ध्वरेता होता इस प्रकार सुरक्षित वीर्य की वृद्धि होकर शरीर में बल, पराक्रम, आरोग्य, धैर्य और बुद्धि होती है।

परीक्षा :—वीर्य चढ़ जाने की परीक्षा इस प्रकार की जाती है कि प्राणायाम कर चुकने पर उस ही समय लघुशंका करने में तार न आवे तो जानो कि वीर्य का आकर्षक भली भांति हो गया।

३६ गर्भस्थापक प्राणायाम

वीर्य प्रक्षेप के समय पुरुप प्राणवायु को धीरे धीरे ढीली छोड़े और अपानवायु को आकर्षण बल पूर्वक करे यही गर्भ स्थापन्न का प्राणायाम है। इस विधि से गर्भ स्थापन्न करने पर यदि तीन ऋतु कालों में भीं गर्भ स्थिति न हो तो जो स्त्री वा पुरुष रोगी हों वह अच्छे वैद्य से अपने रोग का निदान और चिकित्सा करावें। वन्ध्या स्त्री का कुछ भी उपाय नहीं हो सकता।

३७ नाक का मैल और रुकावट दूर करने का प्राणायाम।

पहले एक नाक को उँगली या अँगुठे से बन्द करके दूसरी नाक से श्वास ले, तब दूसरी नाक को बन्द करे और पहली से श्वास लें। इस तरह से अदल बदल कर देर तक श्वास लेते रहें। इस प्रकार से नाक की मैल और रुकावट दूर होती है।

३८ चिरयौवन प्राप्त करने की क्रिया।

स्वीयांगेवहतेनाडीतन्नाडीरोधनंकुरु।
मुखबंधमसूंचन्वैपवनंजायतेयुवा॥

(शि० स्व०)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब जिस अङ्ग में जिस नाड़ी से श्वांस चलती हो, तब वही नाड़ी रोकना पड़ती है। जो बार बार श्वांस की हवा रोक और छोड़ सकता है वह बहुत दिन तक जीता है अर्थात् उसकी अकाल मृत्यु नहीं होती और हमेशा चिरकाल तक यौवन अवस्था में रहता है।

जो योगी विपरीतकरण मुद्रा से अर्थात् सिर के बल पैर ऊपर उठाकर खड़े होकर युक्ति पूर्वक अमाकला से टपकता हुआ अमृत सूर्य मण्डल में न गिरने दे। वह देह को बलि, पलित और जरा से रहित कर देता है। ऐसा करने से देह मजबूत होती है और बहुत दिन तक ठहरती है जितने दिन उसे रहना पूर्व से निश्चित है।

खेचरी मुद्रा से भी यह अमृत सूर्य मण्डल से बचाया जाता है। खेचरी मुद्रा आसानी से होता है। पर यह मुद्रा उन्हीं लोगों से अच्छी सध सकती है जिन्होंने प्राणायाम की आदत डाली हो। जो मनुष्य प्राणायाम कर सकते हैं वे इस मुद्रा को अच्छी तरह से साध लेंगे। [खेचरी मुद्रा का नियम इस प्रकार है—

रसनांतालुमध्येतुशनैःशनैःप्रवेशयेत् ॥
कपालकुहरेजिव्हाप्रविष्टाविपरीतगा ॥
भ्रुवोर्मध्येगतादृष्टिर्मुद्राभवतिखेचरी ॥

जीभ को सिलसिलेवार तालु के बीच में घुसेड़ दो पीछे कपाल कुहर के बीच में ऊपर को उलट कर लगा दो और भौंहों के बीच में दृष्टि जमाओ। ऐसा करने से खेचरी मुद्रा बनती है। इस खेचरी मुद्रा से ब्रह्मरन्ध्र की अमृत धार के पीने से अनोखा नशा चढ़ता, सर चकराता आंखे अधखुली और झुकी रहती हैं। भूख प्यास उस समय बिलकुल नहीं लगती। इस प्रकार खेचरी मुद्रा सिद्ध करने से ब्रह्मरन्ध्र से जो अमृत टपकता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है वह साधक का सारा शरीर सींच देता है। उसके द्वारा साधक की देह मजबूत, बलि पलित और जरा से रहित होती है। शरीर का रंग तेजवान हो जाता है और शक्ति भी बढ़ती है। सच्ची खेचरी मुद्रा मिला सकने से ६ मास के अन्तर्गत साधक सर्व रोगों से छूट जाता है।

—खेचरी मुद्रा के द्वारा भिन्न भिन्न रस का स्वाद मिलता है। अनेक स्वादों के अनेक फल मिलते हैं इस का स्वाद मिलने से रोग मिटता है। घी के स्वाद से अमरत्व प्राप्त होता है। यथाः—

रसनामूर्ध्वगांकृत्वाक्षणार्धमापितिष्ठति ।
विषैर्विमूच्यतेयोगीव्याधिमृत्युजरादिभिः ॥

(गो० सं०)

तालु के ऊपर छिद्र में जिव्हा प्रवेश करके एक घड़ी मात्र [२४ मिनट] खेचरी मुद्रा स्थिर रहे तो योगी को सर्प विच्छ आदियों का विष न लगे और बुढ़ापा रोग मृत्यु को जीतने वली पलित [जो बुढ़ापे में चर्म ढीला हो सलवटें पड़ती हैं] न होवें।

उर्ध्वजिव्हःस्थिरोभूत्वासोमपानंकरोतियः ।
माशार्द्धेनह्यसंदेहोमृत्यूंजयतियोगावित् ॥

[गो० सं०]

तालु के ऊपर छिद्र के सन्मुख जिव्हा लगाय स्थिर कर के भ्रूमध्यगत चन्द्रमा से निकले अमृत का पान जो योगी करे वह १ पक्ष [१५] दिन में मृत्यु को निःसन्देह जीत लेता है यह निश्चय है।

इन्धनानियथावन्हिस्तैलवतिचदीपकः ।
तथासोमकलापूर्णदेहीदेहंनमुञ्चति ॥

(गो० प०)

जैसे अग्नि काष्ट को एवं दीपक तेल सहित बत्ती को नहीं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छोड़ता तैसे ही चन्द्रामृत पूरित देह को जीव कदापि नहीं छोड़ता।

गोमांसंभक्षयेन्नित्यंपिवेदमरवारुणीम्।
कुलीनंतमहंमन्येइतरेकुलघातकाः॥

(गो० प० १६)

जो योगी नित्य गो मांस भक्षण एवं अमर वारुणी पान करे तो उसे आचार्य कहते हैं कि हम उत्तम कुल में उत्तम समझते हैं अन्यथा कुयोगी कुल नाशक हैं सत्कुल में उत्पन्न हुए भी तो उनका जन्म व्यर्थ है।

गोशब्देनोदिताजिह्वातत्प्रवेशोहितालुनि।
गोमांसभक्षणतत्तु महापातकनाशनम्॥

गो शब्द करके यहाँ जिह्वा का बोधक है, जिह्वा के कपाल छिद्र में प्रवेश करने को गो मांस भक्षण कहते हैं, । यह महापा-तकों को नाश करता है।

जिह्वाप्रवेशसंभूतवन्हिनोत्पादितःखलु।
चन्द्रात्स्रवतियःसारःसस्यादमरवारुणी।

अमर वारुणी का अर्थ है कि तालु के ऊपर छिद्र में जिह्वा के प्रवेश उष्मा (गर्मी) से भृकुटि के भीतर वाम भार्गास्थित चन्द्रामृत द्रवित होकर जिह्वाग्र में प्राप्त होता है इसे अमर वारुणी पान कहते हैं।

'द्रष्टव्य'—ऐसा करने वाले योगी का रोग तथा बृद्धावस्था का नाश होता है आकर्षण शक्ति बढ़ती है, आठों सिद्धि मिलती हैं, देव भाव मिलता है।

३६ दीर्घ जीवन प्राप्ति का उपाय।

संसार में ऐसा कौन मनुष्य है जो अधिक दिन जीना न

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहता हो ? जो लोग भयानक दुःख उठा रहे हैं। असाध्य रोग में ग्रस्त हो रहे हैं। वही तो मृत्यु को अच्छा समझते हैं। बाकी के सब मनुष्य अधिक दिन तक जीने की जरूर ही इच्छा करते हैं। तथापि वर्तमान में अनेक पुरुष अकाल मृत्यु के मुख में फँसते हुए दिखाई दे रहे हैं इसका कारण क्या है ? और इसके दूर करने का उपाय क्या है ? इस प्रकार के प्रश्न प्रत्येक बुद्धिमान लोगों के हृदय में उठते हैं पर इन प्रश्नों का हल अभी तक ठीक तौर से नहीं हुआ। यहाँ पर स्वर विज्ञान के अनुसार कारण और उपाय बतलाया जाता है। आशा है कि इसके द्वारा जनता लाभ लेने से बंचित न होगी।

यहाँ यह भी जान लेना उचित है कि चैतन्य और जड़ के संयोग से देह बनती है। उसमें जो जीव है वही असल में सुख दुःख जन्म मरण को जानने वाला और सहन करने वाला है। उस जीव को संसारी जीव कहते हैं। इन संसारी जीवों के संकल्प विकल्प रूप परिमाण हुआ करते हैं। इन्हीं परिणामों के द्वारा संसारी जीव वर्तमान अवस्था में पूर्ण कर्म का बंधन होता है। कर्म बन्धन संकल्प विकल्प रूप शुभाशुभ परिणाम के द्वारा ही जीव को होता है। उसी कर्म के द्वारा शरीर की आयु जितने समय तक बँध जाती है, उतने ही समय तक शरीर में जीव रहता है।

वर्तमान में द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के अनुसार साधारण आयु स्थिति १२० वर्ष की है। तब क्या कारण है कि पूर्ण आयु को प्राप्त न होकर मनुष्य शीघ्र मृत्यु मुख में पड़ जाता है। उसका कारण यही है, कि आज कल हम लोगों के आहार बिहार का क्रम बिलकुल बदल गया है। हमारे भावों में भी परिवर्तन हो गया है अर्थात् हम लोग प्रकृति के विरुद्ध मिथ्या आहार विहार और अपवित्र विचारों में लीन हैं। इस लिये जन पदोध्वंस बीमारियों के आक्रमण में फँस कर अकाल मृत्यु मुख में

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गिर जाते हैं। इस अकाल मृत्यु को टालना ही दीर्घ जीवन प्राप्त करना है।

अगर कोई कहे कि जीवन की अवस्था १२० वर्ष की है और जो उपाय यहाँ पर बताते हो उनके द्वारा दो सौ चार सौ वर्ष तक की आयु मिले तो ऐसा होना असम्भव है। हाँ जो नियत आयु है वही प्राप्त हो सकती है।

स्वर वैज्ञानिक भी कहते हैं, कि "दिल को सब तरह की चाहना और बुरे विचारों से पृथक् रखना अर्थात् अपने भावों को शुद्ध रखना ही बहुत दिन जीने का समय है।" भावों को इस प्रकार रखना चाहिए जिसमें काम, क्रोध, मान, माया, लोभ इत्यादि विकार किसी तरह मन को दुखी न कर सकें। दर्शन, विज्ञान आदि शास्त्र कर्ताओं ने गहरी खोज की तरकीब से जीव के जीने मरने का कारण और दीर्घ जीवन पाने की युक्ति बता दी है। इसका सार उपरोक्त लेख में बता ही दिया है। अब यही दिखाना है कि स्वर शास्त्र के अनुसार कैसे दीर्घ जीवन मिलता है।

४० श्वास की स्वभाविक चाल।

"प्रवेशेदशभिःप्रोक्तःनिर्गमेद्वादशांगुलम्।"

अर्थात् श्वास लेते याने नथनों से श्वांस खींचते समय १० अंगुल श्वांस बराबर भीतर घुसती है और श्वांस छोड़ते समय १२ अंगुल श्वांस की वायु बाहर निकलती है।

नथने से किसी के बाहर अंगुल रख कर उसी पर जरा सी रूई रख दे और परीक्षा करे। अगर उसे श्वांस मार कर जाय। तो रूई हटाकर देखना चाहिये, कि कितनी दूर तक श्वांस चलता है।

असली हालत से विशेष अर्थात् १२ अंगुल से विशेष श्वांस चले, तो समझना चाहिये, कि मृत्यु की राह में जीवन पहुँच रहा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। प्राणायाम मालूम रहने से विशेष श्वांस चलना सरलता से हटाया जा सकता है। जितनी लम्बी और जोर की श्वांस चलेगी उतने ही जल्दी मृत्यु निकट आ पहुँचेगी। इसलिये प्रत्येक मनुष्य का काम है कि, अपनी श्वांस को स्वाभाविक नियम पर चलावे।

आदमी के श्वांस छोड़ते समय १२ अंगुल बराबर श्वांस की हवा निकलती है। पर खाने, चलने, रमने ओर गाने वगैरह के कार्यों में असली चाल से विशेष श्वांस दूर तक चलती है। यथा :—

स्वाभाविक वायु १२ अंगुल।
गाने में — १६ „
भोजन में — २० „
चलने में — २४ „
सोने में — २४ „
मैथुन में — ३६ „

थकावट पैदा करने वाले अति परिश्रम कार्यों में इससे भी विशेष श्वांस बाहर निकलती है।

"योग की अंगीभूत क्रिया के अनुष्ठान से श्वास को स्वभाविक चाल में रखना ही जीवन बचाने का अद्वितीय साधन है।

जो मनुष्य प्राण वायु को (दिन भर सूर्यस्वर बन्द रखे और रात्रि को चन्द्रस्वर बन्द रखे) रोकता है। वह ऐसे अभ्यास से बहुत दिन जीता है। विशेष वर्षों तक दीर्घ जीवन प्राप्त करता है।

यद्यपि श्वांस की स्वाभाविक चाल १२ अंगुल लम्बी है, तथापि स्वर विज्ञान का यह नियम है, कि जितनी श्वांस स्वाभाविक चाल से भी कम चले, उतना ही अधिक दीर्घ जीवन और अन्य सिद्धियां प्राप्त होती हैं।

४१ काल ज्ञान।

जब यह निश्चित रुप से ज्ञात है कि काल (मृत्यु) में फँस

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर किसी दिन मरना अवश्य है तब कौन नहीं जानना चाहता कि कितने दिन बाद अपने प्राण से प्यारी स्त्री, पुत्र, कन्या, धन और लोगां से भरा आराम का धाम यह संसार छोड़कर चल देना पड़ेगा विशेष कर मृत्यु को पहले जान लेने से सांसारिक और आवश्यकीय काम में खूब सुभीता मिलता है। इस लिये यहां वह मृत्यु वाले लक्षण जो अनुभव सिद्ध कई सत्पुरुषों से हो चुके हैं लिखता हूँ।

मासादौचैवपक्षादौवत्सरादौयथाक्रमम् ।
क्षयकालंपरीक्षेतवायुचारवशात्सुधीः ॥
(शि० स्व०)

अर्थात् मास के, वर्ष के, और पक्ष के प्रथम दिन में से कोई भी दिन वायु के संचार वश से मरण काल की परीक्षा करे।

मृत्यु लक्षण।

तीन वर्ष पश्चात् मृत्यु—

अहोरात्रयदैकत्रवहतेयस्यमारुतः ।
तदातस्यभवेन्मृत्युःसम्पूर्णवत्सरत्रये ॥
(शिव० स्व०)

दिन रात जिसके दोनों नथनों से बराबर एक साथ जोर से श्वांस चले, उसी दिन से तीन वर्ष पश्चात् उसकी मृत्यु होगी। दिन रात का प्रमाण यहाँ पर २४ घण्टा का है। २४ घण्टे तक सुषुम्ना नाड़ी जोर के साथ चले तो उसकी तीन वर्ष पश्चात् मृत्यु होगी।

दो वर्ष बाद मरण का लक्षण—

जिस मनुष्य का श्वांस दो दिन रात का सूर्य अर्थात् श्वांस दाहिने नथने से निकलता है, उसकी आयुष्य तत्व वेत्ता जनों ने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो वर्ष की कही। दो दिन का प्रमाण ४८ घण्टे का चाहिये। इसी प्रकार सर्वत्र जाने।

एक वर्ष बाद मरण का लक्षण—

तीन दिन और रात भर अर्थात् ७२ घण्टे तक समान श्वांस उसी सूर्यस्वर दाहिने नथने से चले तो उस मनुष्य की आयु एक वर्ष तक रहेगी।

नौ महीने बाद का लक्षण—

जो पुरुष दीपक को कभी तो सुवर्ण के समान रंग वाला देखे और कभी कृष्ण वर्ण सरीखा देखे और ५ तत्वों को विपरीत देखें, वह नौ मास तक जीता है।

६ महीने के बाद मृत्यु का लक्षण —

जिस मनुष्य की बीच की तीन अंगुली टेढ़ी न होवे और रोग के बिना ही कण्ठ सूख जावे और बार बार जड़ता से प्रश्न करता रहे, वह मनुष्य ६ महीने बाद मरण को प्राप्त होता है। वा जिस मनुष्य को वर्ष, मास और पक्ष के आदि में रात्रि को चन्द्र स्वर और दिन को सूर्य स्वर निरन्तर चले ता वह ६ मास के भीतर मृत्यु को प्राप्त होता है। अथवा जो कोई कान में होते हुए शब्दों को नहीं सुन पाता है वह भी ६ मास के भीतर मृत्यु को पाता है।

पाँच महीने बाद मृत्यु का लक्षण—

मैथुन करते समय आदि में, मध्य में और अन्त में जिस मनुष्य को हिचकी लगती है, वह पाँच महीने से अधिक नहीं जी सकता।

चार मास बाद मृत्यु का लक्षण—

जिस मनुष्य की आँखों का तेज [प्रकाश] न रहे और दोनों नेत्रों में पीड़ा होवे उसका चौथे महीने में निश्चय पूर्वक मरण होता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसका दांत और वृषण [फोता] दबाने से दर्द न मालूम पड़े, उस मनुष्य की तीन महीने के अन्दर मृत्यु होती है। वा स्नान (नहाने) से ही जिसको छाती, पाँव और सिर सूख जाता है, उसकी तीन मास में मृत्यु होती है।

एक महीने बाद मरण का लक्षण—

जिसका हमेशा चन्द्रस्वर चले और सूर्यस्वर कभी न हो ऐसे की एक मास में मृत्यु होती है। वा जिसका सोलह दिन तक सूर्यस्वर चलता हो तो उसकी एक मास में मृत्यु होगी। वा घी, तेल, पानी में अपना प्रतिबिम्ब देखते समय अपना सिर नजर नहीं आवे, वह एक मास में मरेगा। बिना किसी कारण के जो मनुष्य मोटे का एक दम दुबला हो जाय या दुबले का एक दम मोटा हो जाय, उस पर एक महीने में मृत्यु का आक्रमण होगा। वा हाथ से कान का छेद बन्द करने पर, कान के भींतर एक तरह की समझ में आने वाली आवाज सदैव होती रहती है। जो मनुष्य इस आवाज को नहीं सुनता वह एक मास के भीतर मृत्यु जाल में फँस जाता है।

पन्द्रह दिन बाद मृत्यु का लक्षण—

जिस मनुष्य का हमेशा सूर्यस्वर ही चले और चन्द्रस्वर बिलकुल न चले उस मनुष्य की पन्द्रह दिन में मृत्यु होती है।

दस दिन बाद का लक्षण—

मूत्र, मल और वायु ये एक ही समय निकलें तो दस दिन में जरूर ही मृत्यु होगी।

नौ, सात, पाँच, तीन और एक दिन में होने वाली मृत्यु का लक्षण—

नवभ्रु वंसप्तघोषंपंचतारांत्रिनासिकाम्।
जिव्हामेकदिनंप्रोक्तम्रियतेमानवोध्रुवम्॥

जिस दिन भ्रकुटि (भौंहें) न दीखें उस दिन से नौ दिन में

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मरे। कानों में शब्द न सुने तो सात दिन में मरे। तारा न दिखाई दे तो पाँच दिन में मरे। नासिका न दिखाई दे तो तीन दिन में मरें। और जीभ नं दिखाई दे तो एक दिन में मरे। ऐसा जानना।

४२ छः महीने बाद मरण का असाधारण लक्षण

(परीक्षित)

यह प्राकृतिक नियम है, कि दाहिने हाथ की मुट्ठी बाँधकर नाक के बराबर या भौंह के ऊपरी मत्थे पर रख नाक के सामने हाथ वाले कब्जे के नीचे बराबरी में नजर डालने से हाथ बहुत पतला देख पड़ता है। लेकिन जिस दिन हाथ से मुट्ठी का मेल न रहे, अर्थात् मुट्ठी हाथ से निगली मालूम हो, उस दिन छः मास में जरूर मृत्यु होगी। किसी हालत से नहीं रुकेगी।

यह लक्षण मिलने पर रोज सवेरे आँख अंगुली के सिरे से आँख का कोई कोना जरा दबाने से उसकी उलटी तरफ आँख के भीतर अजमावे, कि चमकता हुआ सितारे जैसा बिन्दु (इस बिन्दु की मुख्य पहिचान यह है, कि जिस प्रकार मोर का पंखा बीच में नील वर्ण और आस पास कुछ पीले वर्ण का होता है, उसी प्रकार यह बिन्दु दिखलाई देता है) या नुक्ता देख पड़ता है या नहीं ? जिस दिन से यह ज्योति नजर न आवे उस दिन से दस दिन के भीतर अवश्य मत्यु होती है। मरने के पहले यह दो लक्षण सब लोगों के शरीर में झलकेंगे।

४३ रोगविज्ञान, साध्यासाध्यत्व

आयुर्वेद के रोग विज्ञान का मूल त्रिदोष (वात, पित्त और कफ) विज्ञान ही है। त्रिदोष और स्वरोदय का बहुत सूक्ष्म और निकट सम्बन्ध है। जैसे जैसे त्रिदोष की विकृत और आकृत दशा होती रहेगी उसी प्रकार स्वरोदय की क्रिया में

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्वाभाविक और स्वाभाविक परिवर्तन होता रहेगा।

वात, पित्त और कफ यह तीन दोष हैं, उसी प्रकार इडा (सूर्यस्वर), पिंगला (चन्द्रस्वर), सुषम्ना (संयुक्तस्वर) तीन नाड़ियाँ हैं। प्राण वायु इन्हीं नाड़ियों द्वारा बहा करती है।

"वायुःपितकफश्चेतित्रयोदोषाःसमासतः।"

वायु, पित्त ओर कफ यह तीन दोष शरीर में प्रधान है। रसादि सात धातुओं को और मलों को दूषित करे वह दोष कहलाते हैं। यह सब शरीर में फ़ैले हुए हैं, तथापि नाभि के नीचे वायु का स्थान है, नाभि के ऊपर हृदय तक पित्त का मुख्य स्थल है और हृदय से ऊपर का भाग छाती यह कफ का मुख्य स्थल है।

इसी प्रकार इडा पिंगला और सुषुम्ना इन नाड़ियों को मूल जननी नाभि में सर्प के समान सोती हुई कुंडलिनी नाम शक्ति या कुंडली चक्र है। इस चक्र से कुंडलनी नाड़ी ऊपर को और दस नाड़ी नीचे को गई हैं। लेकिन उनमें तीन मुख्य हैं। यह पहले भी कह आये हैं, पर विषय की अभिज्ञता के लिए और लिखना पड़ा है। प्राण वायु इन तीन नाड़ियों से ज्ञात हो सकता है। इन तीन नाड़ियों से जो वायु बहे वह प्राण वायु है और प्राणवायु का मुख्य स्थान हृदय है।

विकृताविकृतादेहेघ्नंतितेवर्तयंतिच ।
रोगस्तुदोषवैषम्यंदोषसाम्यमरोगता ॥

अर्थात् वातादिक दोष विकृत होने से जीवन नष्ट करते हैं और अविकृत (स्वाभाविक) रहने से जीवन व्यापार चलाते रहते हैं। विषमता है, उसी का नाम रोग है और रोगों की समानता वही आरोग्य है।

उसी प्रकार नाड़ियों के वायु की विपरीतता है यही मृत्यु का कारण है और विपरीतता के समय जो शरीर की अवस्था

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है वही रोग है। प्राणवायु की स्वाभाविक गति होना आरोग्य है। यह बात रोगी मनुष्य के स्वर की चाल से निरोगी मनुष्य के स्वर की तुलना करने पर सहज में ही अच्छी तरह से ज्ञात हो सकती है।

यदाप्रत्यूपकालेनविपरीतोदयोभवेत् ।
चन्द्रस्थानेवहत्यर्कोरविस्थानेचचन्द्रमाः ॥
प्रथमेमनउद्वेगंधनहानिर्द्वितीयके ।
तृतीयेगमनंप्रोक्तं इष्टनाशंचतुर्थके ॥
पंचमेराजविध्वंसंषष्टेसर्वार्थनाशनम् ।
सप्तमेव्याधिदुःखानिह्यष्टमेमृत्युमादिशेत् ॥

उषाःकाल के समय स्वरों का उलटा उदय होवें जैसे— चन्द्र स्वर होवे तो यह फल होता है, कि पहले समय में मन का उद्वेग दूसरे समय में धन हानि, तीसरे समय में यात्रा, चौथे समय में इष्ट पदार्थ का नाश, पाँचवे में राज्य का विध्वंस छठे में सब वस्तुओं का नाश, सातवे में रोगादिकों से दुःख और आठवें में मृत्यु होती है।

इससे जान पड़ता है कि जिस प्रकार वातादिक दोषों से और स्वर की चाल से रोग मालूम पड़ते हैं उसी प्रकार वातादिक दोषों द्वारा स्वर की चाल और स्वर की चाल के द्वारा वातादिक दोष पहिचाने जा सकते हैं। स्वर की चाल के द्वारा बातादिक दोषों की विषमता ज्ञात होने से रोगी की परीक्षा यथार्थ रूप में सरलता पूर्वक हो सकेगी।

प्रत्येक वैद्यों को चाहिये, कि जिस प्रकार वे वातादिक दोषों का ज्ञान नाड़ी विज्ञान के द्वारा प्राप्त करते हैं, उसी प्रकार रोगी परीक्षा के समय रोगी का स्वर देखने के लिये रोगी को कुछ देर तक सीधा (चित्त) सुलाकर फिर उसकी नासिका के पास अपने हस्त की दो अंगुलियां ले जाय और देखे, कि किस

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नासिका से वायु निकल रहा है। चन्द्र स्वर चलता हो और उस तिथि को उस समय चन्द्र स्वर को स्वाभाविक नियम न हो तो, उस रोगी का रोग कफ दोष से उत्पन्न हुआ है ऐसा जाने उसी समय सूर्य नाड़ी भी देख ले कफ की नाड़ी दिखाई देगी। उसी प्रकार सूर्य स्वर चलता हो और स्वाभाविक नियम उस तिथि का सूर्य स्वर न हो तो उस रोगी का रोग पित्त दोष से उत्पन्न हुआ है ऐसा जाने। विश्वास के लिये नाड़ी भी देखलें। पित्त की चाल नाड़ी को दिखाई देगी। वातधिक दोषों में सुषुम्ना की चाल मालूम पड़ेगी। द्वन्दज दोषों में जिस दोष की विशेष अधिकता होगी उस नाड़ी का स्वर मन्द रूप में बहेगा। इस प्रकार स्थूल रूप में नाड़ी और स्वर का मिलान रोग ज्ञान के लिये लिखा है। वैद्यों को अनुभव करना चाहिये और इसकी सत्यासत्य सर्वसाधारण में प्रकाशित करना चाहिये।

साध्यासाध्यत्व

जिसका शरीर अकस्मात् ठंडा होवे और स्वभाव विलक्षण हो जावे अर्थात् जिस प्रकार स्वाभाविक प्रकृति है उसमें विकृति (परिवर्तन) हो जावे, वह संक्षेप में अरिष्ट है, इस प्रकार के रोगी का जीना दुस्तर है।

जो मनुष्य दुष्ट शब्दों में रमता है अर्थात् जो रोगी खराब शब्द बके और उसे खराब शब्द प्यारे लगें तथा जिसकी आत्मा को अच्छे वचनों से पश्चाताप होवे, उस रोगी की अवश्य मृत्यु होती है, इसमें सन्देह नहीं।

जिस रोगी का हुँकार ठंडा हो और मुख से निकला फूत्कार अग्नि के समान गरम हो यह रोगी महान् वैद्यों द्वारा रक्षित होने पर भी निश्चय मृत्यु को प्राप्त होता है।

सन्निपात के पूर्व रूप—

जिस रोगी का अकस्मात् चित्त बिगड़ जाय और एकाएकी उत्तम पुरुष हो जाय अथवा एकाएकी जिसके इन्द्रियों में उत्पात (दुश्चिन्ह) होवे उस रोगी को सन्निपात का पूर्व रूप है ऐसा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाने। बाकी साध्यासाध्यत्व के लक्षण काल ज्ञान में बता दिये हैं। उसे जानकर रोगियों के साध्यासाध्यत्व की पहचान करें। बाद में चिकित्सकगण चिकित्सा करें।

४४ वशीकरण।

निरन्तर परस्पर में दृढ़ता के साथ अपने अपने मन में प्रेम के विचार करें कि "मेरा प्रेम शुद्ध और प्रबल है उसके द्वारा अमुक स्त्री या पुरुष का मन मेरे तरफ प्रेम करने की ओर आकर्षित हो रहा है? इसमें अवश्य सफलता होगी।" अन्तरंग में ऐसा दृढ़ विश्वास रख पूर्ण निश्चल विचार करें। इस प्रकार अगर नित्य १५ मिनट तक शान्त स्थल में अपने प्रेमी की छवि हृदय में धारण कर विचार किया जायगा तो एक दिन वह भी आवेगा, जैसा कि विचार कर रहे हो, उसी मुर्तिमंत की सफलता उस दिन तुम्हें प्राप्त हो रही है, निश्चय रखो? दृढ़ विश्वास रखो ?? अवश्य सफलता होगी ??? यह उत्तम वशीकरण है।

४५ स्वर विज्ञान के अनुसार वशीकरण।

शयनेवाप्रसंगेवायुवत्यालिंगनेऽपिवा।
यःसूर्येणपिवेच्चन्द्रंसभवेन्मकरध्वजः॥
शिवश्चालिंग्यतशक्त्याप्रसङ्ग दक्षिणेऽपिवा॥
तत्क्षणाद्दापयद्यस्तुमोहयेत्कामिनीशतम्।
सप्तनवत्रयःपंचवारात्संगस्तुसूयभे॥
चन्द्र द्विचतुःषट्कृत्वोवश्या भवतिकामिनी॥

(शि० स्व०)

अर्थात् शयन काल में, रति के समय अथवा स्त्री के आलिंगन के समय जो मनुष्य अपने सूर्यस्वर से स्त्री का चन्द्र स्वर पान करता है, वह मनुष्य कामदेव के समान स्त्रियों को मोहित करने वाला होता है। जो रति समय शिव अर्थात् सूर्य स्वर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरुषों का होवे और स्त्री की शक्ति अर्थात् चन्द्र स्वर होवे और ये दोनों स्वर एक में मिल जायें या स्त्री के दाहिने स्वर में अपने चन्द्रस्वर का प्रवेश करने पर पुरुष तत्काल सौ स्त्रियों को मोहित करता है। स्त्री के सूर्य से अपना चन्द्रस्वर मिलने पर सात, नौ, तीन या पाँच बार संग करे। तथा स्त्री के चन्द्रस्वर में अपना सूर्यस्वर देने पर दो, चार या छः बार संग करे। इस प्रकार कार्य करने से स्त्री वश में होती है।

द्रष्टव्यः—स्वर विज्ञान का रहस्य जतलाने के लिए वशीकरण का भी प्रकरण लिखा गया है पुरुष को सदैव स्वस्त्री में स्थिर प्रेम रखने के लिए ऐसा करना चाहिए।

४६ गर्भाधान विधि।

ऋतुस्नातारतानारीपञ्चमेऽन्हियदाभवेत् ।
सूर्योचन्द्रमसोर्योगेसेवनात्पुत्रसम्भवः ॥

रजस्वला धर्म को प्राप्त हुई स्त्री पाँचवें दिन जो पति के साथ रमण करे और उसका चन्द्रस्वर तथा पति का सूर्य स्वर में संयोग हो तो पुत्र उत्पन्न होता है।

"शंखावल्लीगवांदुग्धेपृथ्व्यापोवहते यदा ।
भर्तु रेव वदेवाक्यंदर्पदोहित्रिभिर्वचः ॥"
ऋतुस्नातापिवेन्नारीऋतुदानंतुयोजयेत् ।
रूपलावण्यसम्पन्नोनरसिंहःप्रसूयते ॥

जब पृथिवी वा जल तत्व चलता हो ऋतु स्नाता शंखावल्ली को पी के पति से स्त्री तीन बार संभोग कर ऐसा वचन कहे फिर पुरुष सम्भोग करे तो रूपवान तथा मनुष्यों में सिंह के समान पराक्रमवाला ऐसा ऐश्वर्यशाली पुत्र उत्पन्न होता है। शंखवल्ली का क्षुप होता है, जिसे शंखाहुली भी कहते हैं, इसको दूध के साथ पाना चाहिये।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषमांकेदिवारात्रौविषमांकेदिनाधिपः ।
चन्द्रनेत्रोग्नितत्वेषुवन्ध्यापुत्रमवाप्नुयात् ॥

(स्वरोदय शास्त्र)

ऋतु के चौथे दिन में सोलह दिन तक गर्भाधान समय है। ऋतुस्नान स्त्री चार दिन के उपरान्त विषम दिनों में या रात्रि में जिस समय पुरुष का सूर्यस्वर और स्त्री के चन्द्रस्वर में जब अग्नितत्व चलता हो उस समय भोग करने से बन्ध्या भी पुत्र उत्पन्न करती है।

ऋत्वारम्भेरविःपुँसांस्त्रीणांचैवसुधाकरः ।
उभयोःसंगमेप्राप्तेवन्ध्यापुत्रमवाप्नुयात् ॥

यह अटल नियम है, कि ऋतुकाल के आरम्भ में पुरुषों का सूर्यस्वर और स्त्रियों का चन्द्रस्वर चलते समय काम क्रीडा करने से वन्ध्या को भी सन्तान पैदा होती है।

गर्भाधान में अनिष्ट स्वर ।

सुषुम्नासूर्यवाहेनऋतुदानंतुयोजयेत् ।
अंगहीनःपुमान्यस्तुजायतेत्रासविग्रहः ॥

सूर्य स्वर के बदले में सुषुम्ना स्वर चलता हो तो उस समय जो पुरुष ऋतुकाल में रति-दान करता है, उसके द्वारा स्त्री के कुरूप अंगहीन पुत्र उत्पन्न होता है।

ऋत्वारंभेरविःपुँसांशुक्रान्तेचसुधाकरः ।
अनेनक्रमयोगेनानादत्ते दैवदारुकः ॥

ऋतु के आरम्भ में पुरुषों का सूर्य स्वर चलता हो और वीर्य पतन के उपरान्त चन्द्रस्वर चलने लगे तब यह महायोग भाग्यहीन को गर्भ ग्रहण करने नहीं देता।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४७ पुत्र कन्या विचार।

इन बातों से जाना जाता है, कि पुरुष के संयोग का (रति-काल में) स्वाभाविक स्वर सूर्य और स्त्री का चन्द्र होता है। उसका कारण भी यह है कि जब पुरुष और स्त्री स्वाभाविक लेटते हैं तब पुरुष बांई और स्त्री दाहिनी करवट से सोते हैं। उस समय वास्तव में पुरुष का सूर्य और स्त्री का चन्द्र स्वर चलता है। लेकिन आजकल के मनुष्यों में इस विषय का ज्ञान न होने से तथा विषय लालसा की वृद्धि के कारण अनेक स्त्री पुरुष संतान हीन हो गये हैं। किसी को सन्तान नहीं होती किसी कों होकर शीघ्र ही काल में रोग प्रसित हो जाती हैं, किसी को पुत्र की चाहना होने पर भी कन्या ही कन्याएं होती हैं। इसलिये प्यारे भारत बन्धुओ ? अपनी वीर्य की रक्षा करो, वेश्या तथा पर स्त्री संयोग कर वीर्य का नाश करने से बचो। इसके द्वारा तुम इतने वीर्यहीन और निर्बल हो जाते हो कि जिसमें तुम्हारे स्वपत्नी को गर्भ नहीं रहता। रहे कहां से अति मैथुन के द्वारा तुम्हारा वीर्य क्षीण और अशुद्ध हो गया है। अशुद्ध वीर्य के द्वारा संतानोत्पत्ति नहीं हो सकती। अगर होती भी है, दुर्बल रूपहीन और अल्पायुषी होती है। इसलिये वीर्य की रक्षा करना ही प्रत्येक पुरुष का कर्तव्य है।

ऋतु समय में संभोग समय स्त्री पुरुषों के जैसे पुत्र कन्या के विचार होते हैं, वैसे ही विचार की इच्छा की मूर्तियों द्वारा गर्भ स्थापन में पुत्र कन्या का गर्भ पैदा होता है। यह बात अब बड़े बड़े पाश्चात् विद्वान् भी कहने लगे हैं। इसलिये जैसी संतान की आवश्यकता हो वैसी ही इच्छा और विचार काल क्रीडा के समय रखे। पुत्र की इच्छा हो तो पुत्र के विचार करें। स्त्री को तो गर्भ से लगाकर प्रसव होने तक उत्तम विचार और शुद्ध आचरण रखना चाहिये जैसे विचार के पुत्र की आवश्यकता हो जैसे रूप और शरीर के पुत्र की आवश्यकता हो, जैसे स्वभाव

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और बुद्धि के पुत्र की आवश्यकता हो, उसी प्रकार के रूप, गुण, बल और बुद्धि आदि स्वभाव का पुत्र होगा। संतान का मन चाहा स्वभाव रूप आदि पैदा करना प्रत्येक गर्भिणी स्त्री के हाथों में है। खराब इच्छा है तो दुर्गुणी पुत्र पैदा होगा। सिर्फ अच्छे और बुरे विचार के द्वारा ही गर्भिणी को अच्छा बुरा पुत्र उत्पन्न होता है। इसलिये प्रत्येक गर्भिणी स्त्री का कर्तव्य है, कि शुभ विचार, शुद्ध खान पान और शुद्ध आचरण से रहे। इस प्रकार उद्योग करने से भाग्यवान, सुन्दर, बुद्धिमान, पराक्रमी और दीर्घायु पुत्र होगा। इसमें बिलकुल सन्देह नहीं।*

४८ सत्यवादी और मिथ्यावादी की परीक्षा।

किसी प्रश्न के पूछने पर शब्द का कंपन कान के पर्दे पर पड़ता है। नाड़ियाँ उसे मस्तिष्क में पहुँचा देती हैं। आँख भी वाह्य दृश्यों को मस्तिष्क से चलकर कई नाड़ियाँ ग्रीवा तथा अन्य हिस्सों को आंदोलित कर देती हैं जो हृदय को प्रभावित करता है। इसका फल यह होता है कि रक्त का दबाव तथा हृदय की धड़कन बढ़ जाती है। इस दबाव का पता बाहू तथा पहुँचे पर लगे हुए नाड़ी यन्त्र से चल जाता है नाड़ी यन्त्र में यदि अधिक चंचलता मालूम हुआ तो समझा जाता है कि वह मनुष्य झूठ बोल रहा है। इस प्रकार के सत्यासत्य के बोलने वाले का पत लग सकता है।

स्पष्टीकरण चित्र।

१ नेत्र ने देखा।
२ श्रोत्र को सूचना (खबर) मिली।
३ मस्तिष्क को सूचना किया फिर वही वृत्तान्त—
४ गर्दन (ग्रीवा) के पास आया फिर—
५ रीढ़ (मेरुदण्ड) के प्रारम्भ में फिर—

* विशेष विवरण के लिये 'इच्छानुसार सन्तानोत्पत्ति' पुस्तक पढ़ें

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६ रीढ़े के मध्य के मध्य में फिर—
७ रीढ़े के मध्य के नीचे फिर—
८ रीढ़े के अन्त फिर—
९ हृदय फिर—
१० बाहु फिर—
११ टेहुनी फिर—
१२ नाड़ी स्थान (कलाई)।

जिस प्रकार शारीरिक वैद्य नाड़ियों को देखकर वात पित्त कफादि रोगों की परीक्षा कर लेता है उसी प्रकार मानसिक वैद्य उन्हीं नाड़ियों से सत्यवादी और मिथ्यावादी की परीक्षा भी कर सकता है।

उन्तालिस रोगों के किञ्चत् उपयोगी संकेत।

१ खाँसी—नाक की एक ओर या होंठों के ऊपर नाक के पास या कान को जोर से दबाने से खाँसी बन्द हो जाती है।

२ सिर दर्द—जो दर्द प्रातः काल हुआ करता है दोनों हाथ कुछ देर ऊपर उठाकर रखने से अच्छा हो जाता है।

३ नाक में कोई वस्तु घुसना—यदि कोई वस्तु नाक में घुस जावे तो दूसरे नथने को बन्द करके उस मनुष्य के मुह से मुह लगाकर जोर से फूक देवे ऐसा दो तीन बार करने से वह चीज निकल जाती है।

४ छाती का दर्द—एक पट्टी तीन इंच चौड़ी दर्द के स्थान से लेकर छाती तक कस कर बांधे कई बार अदल बदल करते रहें या बगल से आरम्भ करके चन्द लपेट छाती के गिरद लगाये और दूसरी ओर पिन से टांग देने से दर्द को शान्ति मिलेगी।

५ वमन (कै)—बाजू के बांधने से कै रुक जाती है।

६ छींक—चिन्ता करने और नाक कान मलने से बन्द होती है।

७ कान में पानी पड़ना—जिधर के कान में पानी पड़ गया हो उसके विरुद्ध एक पांव पर कूदने से निकल जाता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८ नकसीर फूटना—मुह पर ठण्डा पानी, डालना और दोनों हाथ ऊपर को उठाने से, बन्द होती है।

९ हिचकी—किसी बात की अचानक चिन्ता में लगा देना वृहद् हिचकी को भी शीघ्र बन्द कर देता है। भौहों के स्थान पर तीन मिनट तक अंगुठे से दबावे तौ भी हिचकी बन्द हो जाती जाती है। गर्भवती की हिचकी आमाशय के स्थान पर एक छोटी गद्दी रख कर चौड़ी पट्टी बांधने से दूर होती है।

१० दमा—जहाँ तक सम्भव हो श्वास को रोककर भीतर हवा निकाले यदि दम घुटता हो तो एक दम बहुत लम्बा श्वास लिया जावे तो पाव घन्टा में ऐठन और तमक श्वास दूर हो जाता है।

११ अजीर्ण—बाजू आगे को बढ़ा कर हाथ जोड़कर दाहिने बाऐं को बीस बार इस प्रकार मोड़ने से अजीर्ण को लाभ-दायक है।

१२ सुस्ती जिगर—उस स्थान पर ऊपर से नीचे की ओर १५ या २० बार हाथ से दबा कर मालिश करें ऐसा करने से दिल की अग्नि और पिंडली या पांव के अंगूठे की ऐठन भी दूर हो जाती है।

१३ जुकाम—नाक की नोक को उगलियां से दबाकर वासे तक दबाता चला जावे। इस प्रकार १५ या २० बार करने से जुकाम बन्द होने में लाभदायक होगा।

१४ अण्डकोष सूजन—जिस तरफ सूजन हो उसके दूसरी तरफ के अंगूठे को डोरे से बांधने से आराम पहुँचता है।

१५ नकसीर—गर्दन की मालिश से नकसीर अच्छी होती है।

१६ बिवाई फटना—प्रातः सायं मालिश किनारों से ऊपर की ओर किया जावे तो आराम शीघ्र होना है।

१७ चेचक—रोगी को सूर्य की रोशनी से पृथक् रखकर अंधेरे में रक्खें तो दानों में न पीव पड़ेगा न दाग अधिक प्रगट रहेगा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१८ बन्द—रूई की गद्दी बहुत मोटी लगा कर पट्टी कसकर बांध देवे तो बैठ जायगा ।

१९ फितक—या नलों में पानी उतरना—प्रतिदिन प्रातः काल अपना दायां अंगूठा तालू से १०, २० बार मलना, लाभ दायक है ।

२० आतशक गर्मी—सूर्य निकलने से पहले ताजा पानी प्रतिदिन पीया करें तो कभी न होगी ।

२१ सरदर्द—बार बार सर में कंघी करने से अथवा मज्जीठ का टुकड़ा बाँधने से जाता रहता है ।

२२ सुजाक (मूत्र कृच्छ)—प्रारम्भ में तीन दिन न आवे तो स्वयं आराम हो जावेगा ।

२३ दर्द कमर—भोजन करने के पश्चात् मूत्र करने का टेव से कभी नहीं होता ।

२४ खाँसी—बार बार दर्पण देखने से लाभ होता है ।

२५ दर्द दांत—यदि पाखाने में बैठते समय दांतों को दबाकर बन्द रक्खा जावे तो कभी दर्द न होगा ।

२६ बवासीर—बोझीली वस्तुओं को उठाकर ले जाने का अभ्यास कुछ दिन करने से अच्छी हो जाती है । या उत्पन्न नहीं होती ।

२७ बिच्छू का काटा—ओंगा की जड़ केवल दिखाने से या लगाने से आराम होता है । इमली का बीज पानी से घिसकर उसे काटे की जगह जोर से चिपका दें ।

२८ सरलता से बच्चा उत्पन्न होना—कौंच की जड़ गले में लटकाने से अथवा एक तोला गऊ का गोबर छटाँक पानी में घोल के छानकर पिलाने से बच्चा शीघ्र उत्पन्न होता है ।

२९ सोते समय सीधे लेट कर पैरों के पंजों की ओर या कंठ मानसिक रूप में ध्यान लगाने से नींद फौरन आवेगी ।

३० ज्वर या किसी तरह का दर्द, फोड़ा, घाव इत्यादि रोग में बहुत दुःख होता हो, उस समय जिस नथने से श्वांस चलती हो, उसे अति शीघ्र बन्द करदें । जितनी देर या जितने दिन

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर पूर्ण अवस्था पर न पहुँचे उतनी देर या उतने दिन वह नथना बन्द रखे। ऐसा करने से शीघ्र ही शरीर आरोग्य हो जायगा।

३१ अस्थि (हड्डी) भंग की दवा—मजीठ, महुए की छाल और इमली के पत्ते पीसकर गरम करके बाँधने से टूटी हड्डी जुड़ जाती है।

३२ रक्त स्राव बन्द करने की औषधि—कहीं चोट लग जाय, नाड़ी कट जाय तो उसमें मिश्री बारीक पीसकर या चीनी लगा देवे। रक्त का बहना तुरत बन्द हो जायगा। (अथर्ववेद)

३३ गूग्गल गुण—गूगल के धूम्र को छाती में देने से, क्षय रोग, श्वांस, कास, विषम ज्वर, जीर्ण ज्वर, सन्निपात, को लाभ करता है। (अथर्ववेद)

३४ प्रमेह—पलाश फल १ तोला चीनी आधा तोला एक साथ ठण्डे बासी पानी के साथ पीने से सब प्रकार का प्रमेह आराम होता है।

३५ प्रदर—गूलर के पत्ते का रस १ तो० लाख दाने दार बारीक पीस के छानकर प्रातःकाल ४ मासा के साथ ग्रहण करने से खून का अधिक आना एक सप्ताह में अवश्य दूर हो जाता है।

३६ बन्ध्या रोग—असगन्ध का काढ़ा दूध में औटाना फिर घी १ तो० मिलाकर ऋतु स्नान के पश्चात् पीने से बन्ध्या दोष दूर होता है।

३७ प्रसव विलम्ब चिकित्सा—अपामार्ग (ओगा) की जड़ पीसकर चवन्नी भर खिलाने से शीघ्र प्रसव होता है।

३८ मृत संतान प्रसव—पीपल और बच पानी में पीसकर रेंड़ी का तेल मिलाकर नाभि में लेप करने से मृत संतान प्रसव होता है।

३९ रजो दर्शन करने का उपाय—जिस स्त्री का रजो धर्म बन्द होगया हो तो वह कुछ दिन अजवायन अथवा काला तिल प्रातः सायं १-१ तो० खावे रजोधर्म खुल जावेगा।

॥ इमित्योम् ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

❀ विषय सूची ❀

विषय	पृष्ठ
द्वितीयावृत्ति की भूमिका	३
विनम्र निवेदन	४
प्रार्थना	५
चत्वारि चिकित्सा वर्णन	५
अग्नि तथा हवन चिकित्सा	७
सौर चिकित्सा	६
वायु चिकित्सा	१०
जल चिकित्सा	१३
सीनीवाली (वाष्प चि०)	१८
औषधि चिकित्सा	१६
मानस चिकित्सा	२४
सुगम चिकित्सा	३१
सर्वदा स्वास्थ्य रहने का प्राकृतिक नियम	३१
प्राणायाम चिकित्सा क्या हैं ?	३४
नाड़ी भेद और नाड़ियों की उत्पत्ति स्थान	३७
स्वर की पहिचान	४५
स्वर चलने का नियम	४५
पंचतत्वों का उदय	४७
स्वर साधन विधि	५०
स्वर को नियमित करने की विधि	५२
स्वर साधकों के लिये नियम	५३
तत्व क्या है ?	५५
तत्वों का उदय और लय	५६
शारीरिक तत्व स्थान	५६
तत्व के अनुसार श्वास की गति	५७
स्थान पर से तत्व ज्ञान	५८
पांच तत्वों के रंग, रूप, गुण	५८
तत्व साधन द्वारा भूतजय की प्राप्ति	६०
तत्व साधन के नियम	६१
तत्व साधन और स्वर साधन का फल	६२
वाम नासिका श्वास फल	६५
दक्षिण नासिका श्वास फल	६५
सुषुम्ना नासिका श्वास फल	६५
रोगोत्पत्ति का पूर्वज्ञान और प्रतिकार	६६
श्वास प्रश्वास की स्वाभाविक चाल	६७
विपरीत स्वर का प्रतिकार	६८
नथना बंद करने की तरकीब	६८
निःश्वास परिवर्तन का कौशल	६८
पवन विजयी कौन हो सकता है !	६६
बिना औषध रोगों की चिकित्सा का उपाय	७०
श्वासोच्छ्वास रहस्य	७१
प्राण क्या है ?	७३
नाड़ी संस्थान	७४
नाक से श्वास लेना या मुख से श्वास लेना	७७
पूरी श्वास का साधन	७८
पूरी श्वास का फल	७८
दीर्घ श्वास प्रश्वास की क्रिया	७६
व्यायाम	८०
फेफड़ा साफ करने वाली श्वास क्रिया	८०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय	पृष्ठ
सुखदायिनी और शक्ति वर्धिनी श्वास क्रिया	८१
स्वरीली ध्वनि (आवाज) बनाने की श्वास क्रिया	८१
दुर्गन्धित श्वास निवारण विधि	८१
रुधिर संचारक विधि	८२
कंप और ताल युक्त श्वास क्रिया	८२
तालयुक्त श्वास का साधन	८५
मनः संयुक्त श्वास	८६
मानसिक श्वास के द्वारा मन की बातों का भेजना	८७
दूसरों के मलिन विचारों और नीच प्रभावों से बचने का उपाय (कवच रचना)	८८
मानसिक अभिष्ट गुणों की प्राप्ति और पुष्ट करने की विधि	८९
मानसिक वृत्तियों पर अधिकार करने की क्रिया	८९
योगी की मानसिक महाश्वास	८९
आत्मज्ञान विधि	९०
प्राण महिमा	९१
प्राणायाम से लाभ	९२
प्राणायाम विधि	९८
सूर्यभेदी प्राणायाम	१०२
उज्जायी प्राणायाम	१०३
शीतकारी प्राणायाम	१०४
शीतली प्राणायाम	१०४
भास्त्रिका प्राणायाम	१०४
भ्रामरी प्राणायाम	१०५
मूर्च्छा प्राणायाम	१०५
प्लाविनी प्राणायाम	१०५
प्राणायाम सिद्धि लक्षण	१०५
स्वर चिकित्सा	१०६
स्वर साधन से साधारण लाभ	१०७
स्वर परिवर्तन विधि	१०७
स्वरोदय और खान पान	१०७
कार्य्याकार्य्य विचार	१०७
स्वरोदय द्वारा व्याधियों की चिकित्सा	१०८
प्राणायाम द्वारा योगिक चिकित्सा	१०९
त्रिविध प्राणायाम की साधन विधि	१०९
थकान दूर करने की सुखदी-प्राणायाम	१०९
साधारण ज्वर और साधारण क्षुधाबंद करने का प्राणायाम	१०९
वीर्यस्तम्भक (ऊर्ध्वरेता) प्राणायाम	१०[illegible]
ब्रह्मचर्यसाधक प्राणायाम	१[illegible]
समस्त शरीर को स्वस्थ रखने का प्राणायाम	११[illegible]
शक्ति प्राप्त करने और स्थिर रखने का प्राणायाम	११[illegible]
रक्त संचारक और विचार शक्ति वर्धक प्राणायाम	११[illegible]
स्मृति वर्धक इच्छा शक्ति उत्तेजक प्राणायाम	१११
शीत निवारक प्राणायाम	१११
आमाशय के साधारण रोग	

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.